ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

# शांतिधर्मी

अगस्त, 2014

## सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण

₹10

पूर्णांक 187

# अमर क्रांतिकारी ऊधमसिंह की स्मृति : लन्दन से डॉ. कविता वाचक्नवी द्वारा प्रेषित

Pentonville Prison

कैक्स्टन हाल

प्रथम चित्र को ध्यान से देखिए यह अमर शहीद ऊधम सिंह (26 दिसंबर 1899-31 जुलाई 1940) का चित्र है, जिनका 31 जुलाई को बलिदान-दिवस है।जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड का बदला लेने के लिए 13 मार्च 1940 को उन्होंने 10 कैक्स्टन हाल में सभा के मध्य मंच पर स्थित पंजाब के तत्कालीन (जलियाँवाला बाग काण्ड के समय) गवर्नर **Michael O'Dwyer** को सिर में दो गोलियाँ मार कर उसकी हत्या कर दी थी व पुलिस उन्हें गिरफ़्तार कर ले गई थी। अपनी गिरफ्तारी (और सुनिश्चित मृत्युदण्ड) के अवसर पर भी उनके चेहरे पर हँसी इस चित्र में साफ देखी जा सकती है, जबकि तीन अंग्रेज अधिकारियों के मुख पर बहुत तनाव दीख रहा है। लन्दन के न्यायालय में अपने वक्तव्य में न्यायाधीश द्वारा पूछे जाने पर उन्होंने कहा कि 'मैंने उन्हें इसलिए मारा क्योंकि वे इसी योग्य थे और उनके साथ यही होना चाहिए था'। अत: 31 जुलाई 1940 को उन्हें लन्दन की **Pentonville Prison** में फाँसी दे दी गई। उसी जेल परिसर में उनका शव गाड़ दिया गया क्योंकि तब यहाँ भारतीय विधि से अन्तिम संस्कार की अनुमति नहीं थी। लम्बे अरसे बाद वर्ष 1974 में उनकी अस्थियाँ भारत लाई गईं।

मेरे साथ यह सौभाग्य जुड़ा है कि वर्ष 1974 में जब उनकी अस्थियाँ भारत पहुँचीं थी तब हमारे पिताजी (श्रद्धेय पण्डित इन्द्रजित् देव) मुझे व मेरे भाई को उनके दर्शन करवाने स्वयं ले गए थे। दूसरा सौभाग्य यह कि लन्दन में भारतीय क्रांतिकारियों व नायकों से जुड़े स्थलों के हमने स्वयं जाकर दर्शन किए हैं। अपनी उस चित्रावली से 10 कैक्स्टन हाल (जहाँ उन्होंने गोली चलाई थी) तथा **Pentonville** जेल (जहाँ उन्हें फाँसी दी गई और जहाँ 1940 से 1974 तक उनका शव रखा था) पर जाकर निजी कैमरा से स्वयं लिए गए वे चित्र भी प्रस्तुत कर रही हूँ।

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

# शान्तिधर्मी

अगस्त, २०१४

वर्ष : १६ अंक : ७ श्रावण २०७१ विक्रमी
स ष्टि संवत्-१६६०८५३११५, दयानन्दाब्द : १६२

सम्पादक : चन्द्रभानु आर्य
(चलभाष ०८०५६६-६४३४०)
संयुक्त सम्पादक : सहदेव समर्पित
(चलभाष ०६४१६२-५३८२६)
उपसम्पादक : सत्यसुधा शास्त्री
प्रबंध संपादक : सुभाष श्योराण
आदरी सम्पादक : यज्ञदत्त आर्य
सह-सम्पादक : राजेशार्य आट्टा
डॉ० विवेक आर्य
नरेश सिहाग बोहल
सहयोग : आचार्य आनन्द पुरुषार्थी
श्रीपाल आर्य, बागपत
महेश सोनी, बीकानेर
भलेराम आर्य, सांघी
कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी
विधि परामर्शक : जगरूपसिंह तंवर
कार्यालय व्यवस्थापक : रविन्द्रकुमार आर्य
कम्प्यूटर सज्जा : बिशम्बर तिवारी

मूल्य
एक प्रति : १०.०० रु.
वार्षिक : १००.०० रु.
आजीवन : १०००.०० रु.

कार्यालय :
७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द–१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ६४१६२–५३८२६
ई-मेल-shantidharmijind@gmail.com

## प्रेरणा स्तम्भ

कोई मनुष्य सचमुच धर्मात्मा है या नहीं, इसका पता इस बात से लगता है कि उसके चारों ओर रहने वालों पर उसके व्यवहार से कोई सुखदायक प्रभाव पड़ता है या नहीं। –स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

## क्या? कहाँ?....

आलेख
सफलता के सोपान ८
देश की रक्षा कौन करेगा? ६
श्रीकृष्ण : वंश, जन्मस्थान और समय १२
भारतवर्ष पर हावी होता इण्डिया १७
रिश्वत लौटाने वाला पटवारी १८
देवों का सोमपान २०
आत्मा से परमात्मा तक २२
बालों की समस्याएँ/तुलसी की उपयोगिता २४
अच्छे आचरण में ही सुख (अन्ततः) ३४
कहानी/प्रसंग : वीरवर दुर्गादास राठौड़ (इतिहास कथा) : १४,
देवता व असुर-२७
गढ़ आया पर सिंह गया-२८
कविताएँ- ६, १३, १६, २७
स्तम्भ-आपकी सम्मतियाँ ५, अनुशीलन, सोम सरोवर ६
चाणक्य नीति, अमृतवचनावली ७,
बाल वाटिका २६, भजनावली २९, समाचार सूचनाएँ

## वेद-विचार

### सामवेद आग्नेय पर्व

**पद्यानुवाद :** स्व० आचार्य विद्यानिधि शास्त्री

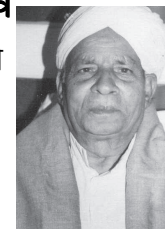

**उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्यागमत्**
**सा शन्ताता मयस्करदप स्रिधः।१०२।।**

दिव्य अदीन देवमाता वह निज रक्षण लेकर आवे।
शुद्ध बुद्धि से युक्त हमारे शुभ अन्तस्तल कर जावे।।
वह सुख शांति विमल कोमलता से सबका दिल हर्षावे।
त्रुटियाँ दूर भगाकर सुन्दर कल्याणामृत बरसावे।।

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

# शान्ति प्रवाह

❑चन्द्रभानु आर्य

## यतो भ्युदयनिःश्रेयस् सिद्धिः स धर्मः।।

मनुष्य जीवन के दो ही लक्ष्य हैं- एक तो इस जीवन में हम सब प्रकार की उन्नति करें, अपने व्यक्तित्त्व का विकास करें, संसार में सम्मान, यश, कीर्त्ति, धनसम्पत्ति, सुख शांति, चक्रवर्ती साम्राज्य तक प्राप्त करें, इसे अभ्युदय कहते हैं। दूसरा इस जीवन के पश्चात् हम उत्तम गति को प्राप्त करें। उत्तम गति और सर्वोत्तम सुख तो मोक्ष ही है। जिसे इन दोनों लक्ष्यों की प्राप्ति, सिद्धि होती है, वही धर्म है। यह बात दर्शनकार ऋषि ने कही है।

यह सूक्ति हमारे संस्कारों में है कि धर्म का पालन करने से सुख मिलता है और पाप करने से दुःख मिलता है। यदि हम जीवन में असंतुष्ट, दुःखी, अभावग्रस्त हैं तो हम धर्म का पालन नहीं कर रहे हैं। यदि ये दुःख पिछले कर्मों के फल हैं तो भी यदि हम धर्म का पालन करते हैं तो शांतभाव से ईश्वरीय न्याय व्यवस्था को समझते हुए अपने कर्मों का फल भोगते हैं। पर यदि हम दुःखों से प्रेम करने लगते हैं तो निश्वय ही यह धर्म का पालन न करने का परिणाम है। व्यक्तिगत जीवन के तनाव और कुण्ठाएँ धर्म का पालन न करने से ही होती हैं। सामाजिक जीवन में अशांति, ईर्ष्या, हिंसा का कारण भी यही है। जिस समाज के लोग धर्म का पालन करते हैं वह एक आदर्श समाज होता है। जिसमें लोग एक दूसरे की सहायता करते हैं, एक दूसरे से प्रेम करते हैं, एक दूसरे के सुख की चिन्ता करते हैं, सुख से जीते हैं और दूसरों को भी सुख से जीने देते हैं।

यदि हम आज की स्थिति पर विचार करें तो देखते हैं कि धर्म के अनुयायियों की संख्या बहुत अधिक है। और संसार की स्थिति देखें तो लगता है कि या तो ऋषि ने यह परिभाषा गलत लिखी है या फिर धर्म का पालन नहीं हो रहा है। जब इतने लोग धर्म के अनुयायी हैं तो संसार में सर्वत्र सुख शांति का साम्राज्य स्थापित हो जाना चाहिए था। वस्तुतः ऐसा नहीं है। तो इसका कारण दूसरा ही है कि धर्म का पालन नहीं हो रहा है।

यह धर्म शब्द जितना प्रतिष्ठित है, उतना ही इसका दुरुपयोग भी हुआ है। धर्म मनुष्य के संस्कारों में तो है, पर उसको इसके वास्तविक स्वरूप को जानने की आवश्यकता पड़ती है और यह कार्य सच्चे विद्वान् महात्माओं का है कि वे मनुष्यों को सच्चे धर्म की शिक्षा दें। सच्चे विद्वान् उपदेशकों के अभाव में धूर्त लोगों ने धर्म के प्रति आदर की भावना का लाभ उठाकर अपने स्वार्थों की पूर्ति की। मत-मतान्तरों, विचारधाराओं यहाँ तक कि युद्धक समूहों को भी धर्म का नाम दे दिया। लोग इन्हीं को धर्म मानने लगे और उनकी उन्नति अवरुद्ध होती चली गई। स्वार्थी लोगों का स्वार्थ तो पूरा हो रहा है पर मनुष्य और समाज का अधोपतन होता जा रहा है।

संसार के दो बड़े सम्प्रदायों इस्लाम और ईसाईयत की प्रतिस्पर्द्धा में सारा संसार आग के ढेर पर खड़ा है। जोर-जबरदस्ती और छल-कपट से लोगों को भ्रमित किया जा रहा है। अब तो विश्व को शांति का संदेश देने वाला इस्लाम अपने ही भाईयों का खून बहा रहा है। उन्हीं के एक छोटे से सम्प्रदाय (यजीदी) की महिलाओं को उनके परिवारों से छीनकर भेड़ बकरियों की तरह मंडियों में बोलियाँ लगाकर बेचा जा रहा है। अच्छे या बुरे कर्म करने वाले दुनिया में हमेशा होते रहे हैं। लेकिन यह सब मजहब और खुदा के नाम पर किया जा रहा है, उनसे भी कोई समस्या नहीं है। बुराई को बुराई कहा जाए या समझा जाए तो भी लोग बुराई से दूर रहने का प्रयास तो करेंगे ही। पर समस्या तो यह है कि लोग अब भी इसी भ्रम में हैं कि मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना।

धर्म का पालन और धारण करने से ही व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में सुख शांति आ सकती है और वह धर्म एक ही है, जो सृष्टि की आदि से सब ऋषि मुनि महात्मा लोग मानते आए हैं। वह वेद का धर्म है। उसका मुख्य तात्पर्य आत्मा की उन्नति है। धैर्य, क्षमा, मन और इन्द्रियों का वशीकरण, दूसरों की उन्नति देखकर प्रसन्न होना, आत्मा और शरीर की शुद्धि, सत्य, विद्या और क्रोध पर विजय आदि उसके लक्षण हैं। महर्षि दयानन्द धर्म के लक्षण लिखते हैं- जो पक्षपातरहित, न्यायाचरण सत्यभाषण आदि ईश्वर की आज्ञा और वेदों के अविरुद्ध है उसको धर्म कहते हैं। ईश्वर ने तो मनुष्य ही नहीं, संसार के सभी प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखने की आज्ञा दी है। इस धर्म का पालन संसार में कोई भी व्यक्ति करे उसे सुख होगा ही, और संसार के वैर विरोध भी मिटेंगे। आज संसार को धर्म के सच्चे स्वरूप से अवगत कराने की सबसे ज्यादा आवश्यता है। त्राहि त्राहि करती मानवता को सच्चे धर्म का पालन करके ही बचाया जा सकता है।

# आपकी सम्मतियाँ

शांतिधर्मी का मार्च १४ अंक मिला, धन्यवाद! आभारी हूँ। देश के भावी कर्णधारों को उत्प्रेरित करता डॉ० जगदीश गांधी का आलेख 'स्कूल बनें प्रकाश के केन्द्र' में बच्चों के समग्र विकास को उकेरने का स्तुत्य प्रयास है। मास्टर दा सूर्यसेन जैसे क्रांतिकारियों के जीवन वृत्त पर आधारित आलेख में हम नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, राजेन्द्र लाहिड़ी, सान्याल, भूपेन्द्रनाथ चटर्जी जैसे तमाम क्रांतिकारी देशभक्तों से मातृऋण से उऋण होने की सीख पाते हैं। नारी का यज्ञाधिकार आलेख भी सारगर्भित है। चाणक्य नीति, अमृत-वचनावली, सीख हम सीखें युगों से, बाल वाटिका स्तम्भ बेहद अच्छे लगे। उत्कृष्ट सम्पादन के लिए साधुवाद स्वीकारें।

**डॉ० रामदुलार सिंह पराया**
उदित नगर, पो० कुसुम्हीं (चुनार)
मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश-२३१३०४

✉

मई अंक मिला। सम्पादकीय 'आत्महत्या-नहीं!' इस अपराध से बचाने के लिए प्रेरित करने वाला है। एक १२ वर्षीय स्कूली बच्चे द्वारा इस प्रकार आत्महत्या के रास्ते को चुनना दुर्भाग्यपूर्ण तो है ही, साथ ही शिक्षक वर्ग, माता-पिता और समाज के सामने भी एक बड़ा प्रश्न खड़ा करता है। सबसे पहले माता-पिता को चाहिए कि वे बच्चों को समझाएँ कि जीवन अमूल्य है। छोटी-छोटी बातों पर जीवन लीला समाप्त करने की सोचना सरासर बेवकूफी है। माता पिता को बच्चों पर सजग दृष्टि रखनी चाहिए और थोड़ा सा भी सन्देह होने पर बच्चे को निराशा, असफलता और चिन्ता से उबारने का काम करना चाहिए। बच्चे को उचित सान्त्वना और प्रोत्साहन की निरन्तर आवश्यकता होती है, जो माता पिता ही सही तरीके से कर सकते हैं। बच्चे ही नहीं, वयस्क भी निराशा की स्थिति में आत्महत्या का रास्ता चुनने को तैयार हो जाते हैं, जबकि आत्महत्या समस्या का समाधान नहीं अपितु पलायन है। इस बढ़िया सम्पादकीय के लिए साधुवाद! 'सूर्य का जन्म' ज्ञानवर्धक है। 'समय का सदुपयोग' रचना प्रेरक है। ईश्वरदयाल माथुर का लेख ज्ञानवर्धक है। रश्मि बिन्दल की कहानी अंधविश्वास का पर्दाफाश करती है। 'स्वास्थ्य के लिए उपयोगी बादाम' और मुंशी प्रेमचन्द की सादगी' रचनाएँ भी प्रेरक लगीं।

जुलाई अंक के सम्पादकीय 'ठीक कहा स्वामी जी लेकिन!' में एक सार्थक चर्चा की गई है। कोई भी भला आदमी भगवान का स्थान नहीं ले सकता। चाणक्य नीति और ज्ञानशतकम् उपयोगी और प्रेरक हैं। नरेन्द्र आहूजा विवेक और मनमोहन कुमार आर्य के लेख समाज में आस्था के नाम पर पनपते अंधविश्वास के बारे में चिन्तन की प्रेरणा देते हैं। बाल वाटिका में विभिन्न रचनाएँ ज्ञानवर्धक, मनोरंजक और दिमाग की कसरत कराने वाली हैं।

**प्रो० शामलाल कौशल**
मकान नं० ९७५ बी/ २०, ग्रीन रोड रोहतक-१२४००१

✉

जुलाई अंक अन्य अंकों की तरह प्रेरक, ज्ञानवर्धक और संग्रहणीय सामग्री से भरपूर है। सम्पादकीय में समसामयिक विषय को लेकर महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाए गए है। शंकराचार्य जी का भारतीय समाज में बहुत ऊँचा स्थान है। भगवान के स्थान पर साईं बाबा की पूजा का विरोध करके उन्होंने संन्यास धर्म का पालन ही किया है, पर न जाने क्यों इतने बड़े शास्त्रज्ञ होते हुए भी वे अवतारों की पूजा का समर्थन करते हैं। जब भगवान का अवतार ही संभव नहीं है, वह सर्वव्यापक है। वह कहाँ से उतरेगा और कहाँ उतरेगा? वेदादि सत्य शास्त्रों से भी अवतार होने की पुष्टि नहीं होती। ईश्वर तो ईश्वर ही है और ईश्वर के स्थान पर केवल ईश्वर की पूजा करना ही शास्त्र-सम्मत है। अलग अलग आस्था होने से ईश्वर का स्वरूप तो नहीं बदल सकता।

**रमेश चन्द्र आर्य,** पूर्व मंत्री वेद प्रचार मण्डल
४७१५, अर्बन एस्टेट, जींद-१२६१०२

## भूल-सुधार

गतांक के मुखपृष्ठ पर डॉ० सत्यपाल सिंह जी सांसद का स्थान बिजनौर छप गया। वस्तुतः आप बागपत से सांसद चुने गए हैं। इस भूल के लिए खेद है।
-सम्पादक

इस पृष्ठ के नियमित लेखक और शांतिधर्मी के स्नेही श्री धर्म सिंह गुलाटी, संगरूर वालों का गत दिनों देहान्त हो गया है। ऐसी सूचना उनके परिजनों ने इण्टरनेट के माध्यम से शांतिधर्मी को दी है। शांतिधर्मी श्री गुलाटी जी के प्रति हार्दिक श्रद्धांजली अर्पित करता है।

## सोम सरोवर (तृतीय खण्ड)

गायत्री छन्दः । षड्ज स्वरः

❑पं० चमूपति जी

# दिव्य सम्पत्ति

परिद्युक्षं सनद्रयिं भरद्वाजं नो अन्धसा।
स्वानो अर्ष पवित्र आ।। १०।।

**ऋषिः** - उक्थ्यः = प्रशंसनीय

(अन्धसा) अपने प्राण-प्रद रस से, (नः) हमें (वाजं भरत्) बल प्रदान करते हुए (द्युक्षं रयिं) दिव्य सम्पत्ति (परिसनत्) चारों ओर से प्राप्त कराते हुए (पवित्रे) हृदय की चलनी में (हे सोम!) (स्वानः) गाते हुए (आ अर्ष) आओ।

हृदय की चलनी में सोम-रस का टपकना और फिर उसका अंग-अंग में छा जाना! क्या अपूर्व अनुभूति है! रोम रोम भक्ति भाव में भीजा हुआ, प्रभु के गीत गा रहा है। एक ताल है कि रोम रोम उस पर नाच उठा है। सम्पूर्ण शरीर एक नई स्फूर्त्ति का घर बन रहा है। श्वास-श्वास में नया जीवन है। ऐसा प्रतीत होता है कि सारा विश्व एक दिव्य ज्योति का रमणागार बन गया है। द्युलोक ने मानो पृथ्वी का स्थान ले लिया है। दिशाएँ दिव्य सम्पत्ति लिए भक्त की ओर झुक सी रही हैं। सारा संसार गीतमय है। गीत और ज्योति! ज्योति और गीत! दोनो तरंगमय हैं। एक तरल प्रवाह है जो निरन्तर बहता चला जाता है।

मोहन! क्या यह गीत तुम्हारा है? क्या यह ज्योति तुम्हारे पवित्र चरणों की है! भक्त तुम्हारा ध्यान करते ही संजीवन रस का स्नान सा कर लेता है। यही रस क्या तुम्हारा सुरीला सोम है? सुरीला और नशीला! क्या इसी के कारण हृदय को पवित्र कहते हैं? अर्थात् सात्त्विक स्नेह की वह चलनी जो सब मलों को निथार लेती है। जहाँ भक्ति का आवेश हो वहाँ पाप कहाँ? ताप कहाँ?

सोम! आओ! अपना दल-बल लेकर आओ! अपनी दिव्य सम्पत्ति अपने साथ लाओ। चारों तरफ से आओ! गाते हुए, पृथिवी और आकाश को अपने दिव्य स्वर से गुंजाते हुए आओ! हृदय की चलनी में संजीवन रस टपकाते हुए आओ!

### झरे सोमरस नित्य निरन्तर,

परम पुरुष का वन्दन करने,
आराधन अभिनन्दन करने।
झरे सोमरस नित्य निरन्तर,
शत सहस्र धाराएँ बन कर।।

सकल जगत् आनन्द-मगन है,
रोम रोम पुलकित तन-मन है,
सतत प्रवाही सोम-सरित् नित,
झरता दिशा-दिशा निशिदिन है।।

वहीं गगन में, हृदयांगन में,
प्रज्ञा बनता है जन-गण में,
होता है जग उससे उज्ज्वल,
करता है वह सबको निर्मल।

झरे सोमरस नित्य निरन्तर,
शत सहस्र धाराएँ बन कर।।

**-सत्यकाम विद्यालंकार**

# चाणक्य-नीति

सप्तमः अध्यायः

(क्रमागत)

**पादाभ्यां न स्पृशेदग्निं गुरुं ब्राह्मणमेव च।**
**नैवं गां न कुमारीं च न वृद्धं न शिशुं तथा।।६।।**

अग्नि, गुरु, ब्राह्मण, गौ, कुमारी कन्या, वृद्ध और शिशु- इनको पैर से स्पर्श नहीं करना चाहिए। इनका तिरस्कार नहीं करना चाहिए।

**शकटं पंचहस्तेन दशहस्तेन वाजिनम्।**
**हस्तिनं शतहस्तेन देशत्यागेन दुर्जनम्।।७।।**

गाड़ी से पाँच हाथ दूर रहो, घोड़े से दस हाथ दूर रहो, हाथी से सौ हाथ दूर रहो और दुर्जन से दूर रहने के लिए तो वह स्थान ही छोड़ दो।

**तुष्यन्ति भोजने विप्राः मयूरा घनगर्जिते।**
**साधवः परसम्पत्तौ खलाः परविपत्तिषु।।८।।**

विद्वान् भोजन मात्र से ही सन्तुष्ट हो जाते हैं, बादल गरजते हैं तो मोर प्रसन्न हो जाते हैं। अच्छे व्यक्ति दूसरों को सुखी व समृद्ध देखकर प्रसन्न होते हैं और दुष्ट व्यक्ति दूसरों को दुःखी व संकट में देखकर प्रसन्न होते हैं।

**अनुलोमेन बलिनं प्रतिलोमेन दुर्जनम्।**
**आत्मतुल्यबलं शत्रुं विनयेन बलेन वा।।१०।।**

बलवान शत्रु के अनुकूल विनय का व्यवहार करके उसे वश में करना चाहिए। दुष्ट शत्रु को उसके विपरीत अर्थात् बल का प्रयोग करके वश में करना चाहिए। जो शत्रु अपने समान बल वाला हो उसे वश में करने के लिए विनय और बल दोनों का ही प्रयोग किया जा सकता है।

**बाहुवीर्यबलं राज्ञो ब्रह्मणो ब्रह्मविद् बलम्।**
**रूप युवां बलं, स्त्रीणां माधुर्यं विनयं बलम्।।११।।**

राजा वही बलशाली है जिसकी भुजाओं में बल हो। ब्राह्मण की शक्ति उसके वेदज्ञान में होती है। युवाओं का बल रूप होता है। स्त्रियों का बल उनके माधुर्य और नम्रता में होता है।

# अमृत वचनावली

## ज्ञानशतकम्

❑डॉ० रामभक्त लांगायन आई ए एस (से० नि०)

**किं कृताभिः सदाशाभिर्जगन्नैराश्यकारणम्।**
**निर्जलेऽपीक्षते नित्यं मृगो जल मरीचिकाम्।।२९।।**

इस संसार में सब कुछ न तो किसी को मिला है और न ही मिलेगा। यहाँ सब आशाएँ निराशा में परिणत हो जाती हैं। मरीचिका में जल नहीं है फिर भी मृग आशा को नहीं छोड़ता।

**दोषाः स्वयं विनश्यन्ति सुविचारित कर्मणा।**
**ज्वलिते लघु दीपेऽपि तमो घोरं विनश्यति।।३०।।**

जैसे छोटा सा दीया जलाने से घनघोर अंधेरा भी दूर हो जाता है, उसी प्रकार विवेक से काम करने पर बुराई और पाप स्वतः दूर हो जाते हैं।

**प्रमादवशगा दोषाः विवेकविहितं हितम्।**
**प्रमादी पापकृत्प्रायो विवेकी पुण्यकृत्सदा।।३१।।**

इस जगत् में कोई भी बुराई बिना बेहोशी के नहीं होती और कोई भी भलाई बिना होश के नहीं होती, इसलिये एक ही मार्ग है- होश से जीना; और एक ही बुराई है- बेहोशी में जीना। यही पुण्य है, यही पाप है।

**न पुण्या पापनाशाय विवेकस्तत्र केवलम्।**
**पुण्या विकासमायान्ति सुविवेकदिवाकरे।।३२।।**

पापों को काटने के लिए पुण्यों की नहीं, होश की जरूरत है। जहाँ होश है वहाँ पाप होने बंद हो जाते हैं और पुण्य ऐसे होने लगते हैं जैसे सूर्य उदय होने पर फूल खिलने शुरू हो जाते हैं।

**मृल्लिप्तं मज्जति पत्रं तथा गर्वेण मानवः।**
**अमृदं तु तरत्येव गर्वहीनस्तथा नरः।।३३।।**

जैसे मिट्टी से लिपटा हुआ पत्ता पानी में डूब जाता है वैसे ही अहंकार से भरा मनुष्य डूब जाता है। जैसे मिट्टी पिघल जाती है तो कार्क या पत्ता पानी के ऊपर आ जाता है ठीक उसी प्रकार अहंकार समाप्त हो जाने पर मनुष्य ऊपर उठ जाता है।

व्यक्तित्त्व विकास

# सफलता के सोपान

❑नरेंद्र आहूजा विवेक 602, जी एच 53, सै. 20 पंचकूला मो. 09467608686

प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहता है और इसके लिए कभी भी, कहीं भी, कुछ भी करने के लिए तैयार रहता है। इस तथाकथित सफलता की प्राप्ति के लिए धर्म मार्ग को छोड़कर पाप के शार्टकट भी मार सकता है। चाहे ये शार्टकट उसके जीवन को कट शॉर्ट ही क्यों न कर दें। हम भी सामान्य जीवन में अपने लिए धन, सुख-सामग्री एकत्र कर लेने वाले व्यक्ति को ही सफल समझते हैं और उसका अनुसरण करने का प्रयास करते हैं।

सर्वप्रथम हमें सफलता की परिभाषा को समझना होगा। सत्य धर्म मार्ग पर चलकर जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति को ही सफलता कहा जाता है। यहाँ 'लक्ष्य' और उसकी प्राप्ति के 'मार्ग' दोनों का महत्त्व है। यदि 'लक्ष्य' ही ठीक नहीं है और व्यक्ति सभी के अधिकारों का हनन करता हुआ समस्त धन ऐश्वर्य अपने पास एकत्र करना चाहता है तो चाहे वह हमें अपनी भौतिक चकाचौंध के सम्मोहन में सफल लगे लेकिन इस भौतिक सुख सामग्री की प्राप्ति के लिए किए गए दुष्कर्मों के दंड का भागी होने के कारण कभी सफल नहीं हो सकता। अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् उसे अपनी करनी का फल अवश्य भुगतना पड़ेगा, इसलिए हमें दिखाई देने वाली उसकी झूठी सफलता ईश्वरीय न्याय व्यवस्था के समक्ष टिक नहीं पायेगी। यदि लक्ष्य सही है लेकिन उसकी प्राप्ति का मार्ग गलत है तो भी व्यक्ति सफल नहीं कहला सकता।

अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि वह 'लक्ष्य' और उसकी प्राप्ति का 'मार्ग' क्या हो जिससे मनुष्य जीवन में सफलता को प्राप्त कर सके। इसका उत्तर अथर्ववेद के इस मन्त्र (१२/५/२) में मिलता है-

सत्येनावृता श्रिया प्रावृता यशसा परीवृता

इस मन्त्र में कुल चार शब्द हैं- सत्य, श्री, यश और इनके साथ प्रयुक्त आवृताः, प्रावृताः और परिवृताः जिनमें एक ही धातु है जिसका अर्थ है सब ओर से। इस मंत्र में जीवन की सफलता का पूरा चित्र है। 'लक्ष्य' और 'मार्ग' दोनों एक साथ समाहित हैं-

**सत्यः-** सर्वप्रथम 'सत्य' आता है। 'सत्येनावृताः' अर्थात् हम सब ओर से सत्य से घिरे हुए हों। जीवन में सुख सामग्री एकत्र कर लेना, गाड़ी, बंगला, धन आदि की प्राप्ति सफलता का पर्याय नहीं है अपितु उन सबकी प्राप्ति के लिए सत्य का होना एक अनिवार्य और प्रथम शर्त है। वेद कहता है कि सफल जीवन की पहचान और उसका आधार सत्य है। यदि हम सुख सामग्री एकत्र करने के लिए झूठ छल-कपट के मार्ग पर चलते हैं तो मकड़ी की तरह अपने ही बनाए झूठ के मकड़जाल में फंस जाते हैं।

**श्री :-** दूसरा शब्द है- 'श्रिया प्रावृताः' अर्थात् हम धन ऐश्वर्य को प्राप्त करें। वेद में मनुष्यों के लिए धन ऐश्वर्य प्राप्ति पर कोई प्रतिबंध नहीं है। ऐश्वर्यशाली ईश्वर ने यह समस्त ऐश्वर्य हम सभी प्राणियों के उपयोग उपभोग के लिए प्रदान किया है। पर केवल सत्य मार्ग पर चलकर एकत्र धन ऐश्वर्य सदैव सुख देने वाला होता है। यह भी ध्यान रखें कि यह समस्त ऐश्वर्य ईश्वर प्रदत्त है और ईश्वर ने वेद में आदेश दिया है- 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' अर्थात् सत्य मार्ग पर चलकर कमाए गए धन ऐश्वर्यों का त्यागपूर्वक भोग करते हुए वेद के इस आदेश का भी पालन करें। 'केवलाघो भवति केवलादी' अर्थात् अकेला खाने वाला पाप खाता है। इसलिए हम सत्य से अर्जित धन का उपयोग मिल बांट कर सामाजिक कार्यों के लिए किया करें।

**यश :-** 'यशसा परीवृता' जीवन में पूर्ण सफलता और लक्ष्य की प्राप्ति के लिए यशस्वी जीवन को परमावश्यक बतलाया गया है। हमारा सत्याचरण यश देने वाला हो। सत्यभाषण के संबंध में कहा है-

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्,
न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।।

अर्थात् सत्य बोलो किंतु मीठा बनाकर बोलो तभी यश मिलेगा। हमारे सत्य का लक्ष्य अहिंसा होना चाहिए। लेकिन प्रिय मीठी बात के चक्कर में सत्य त्याग की अनुमति नहीं है। सत्य के लक्ष्य को समझना होगा। अन्याय करना और सहना दोनों हिंसा की श्रेणी में आते हैं। इसी प्रकार सत्य और परिश्रम से कमाया हुआ धन हमें यश देने वाला हो। धन यश देने वाला तभी होता है जब हमारे अंदर सत्य/ परिश्रम से कमाए गए धन को शुभ सामाजिक उत्थान के कार्यों में दान देने की प्रवृत्ति हो। यश-प्रतिष्ठा की यह भावना लोक-लाज के रूप में पग-पग पर हमें बुराइयों से बचाती है। सम्मानित व्यक्ति का अपयश होना मृत्यु से भी बुरा है तथा बदनामी और अपयश ही नरक है इसके अतिरिक्त नरक कहीं किसी आकाश में नहीं है।

निष्कर्ष यह है कि सत्य धर्म के मार्ग पर चलकर परिश्रम से कमाए धन को सद्कर्मों में लगाकर ही मनुष्य यशस्वी बनता है यही जीवन की सफलता का मार्ग और लक्ष्य की प्राप्ति है।

# देश की रक्षा कौन करेगा!

**पश्चिमी अंधानुकरण और भौतिकवाद की अंधी दौड़ देश को विनाश की ओर ले जा रही है।**

❑**रामफल सिंह आर्य**, म० नं० 87/एस-3, बी.एस.एल कालोनी
सुन्दरनगर, जिला मण्ड़ी, हि०प्र०175019 चलभाष 094184 77714,

**❍मात्र चार पांच दशकों में इतना परिवर्तन हुआ देखकर आने वाले समय का अनुमान करके ही भय लगने लगता है। आखिर किस ओर जा रहे हैं हम? कैसा समाज बना रहे हैं? आने वाली संतानों के लिए क्या छोड़ कर जायेंगे जिस पर वे गर्व कर सकें?**
**❍यह ठीक है कि हमने भौतिक उन्नति बहुत की, परंतु बहुत कुछ ऐसा खो भी गया है जो बहुत आवश्यक था, छूटना नहीं चाहिए था।**
**❍हमारे देश ही नहीं अपितु संसार के अधिकतर देशों में जहाँ-जहाँ पश्चिम की इस भोगवादी संस्कृति ने पांव पसारे वहाँ-वहाँ कलह-क्लेश, स्वेच्छाचारिता, कामुकता आदि दुर्गुण स्वयमेव आ गए।**

जब हम छोटे बच्चे थे तो विद्यालय में एक जयघोष बुलवाया करते थे-देश की रक्षा कौन करेगा? हम करेंगे, हम करेंगे। हम बड़े जोश एवं उत्साह में भरकर इसे बोला करते थे। हमारे अध्यापक लोग सामूहिक प्रार्थना के उपरांत इसे बुलवाते थे। समय-समय पर इस बारे में बड़े प्रेरणादायक वचनों के द्वारा हमें संबोधित भी किया करते थे। जब भी विद्यालय में कोई उत्सव या कोई समारोह होता तो देशभक्ति के गीत ही गाये जाते थे। उस वातावरण का प्रभाव यह था कि उस समय भ्रष्टाचार बहुत कम था, बड़े-बड़े घोटालों का तो नाम भी न था। लोग यह विचार करते थे कि यदि किसी को पता चल गया या किसी ने देख लिया तो कहीं मुंह दिखाने योग्य नहीं रह जाएंगे। गांव की एक बेटी को पूरा गाँव अपनी ही बहन बेटी समझता था और यदि उनकी ओर कोई दूषित दृष्टि से देखता था और किसी को पता चल जाता था तो उसको धिक्कारने वाले एक नहीं अपितु सैकड़ों हुआ करते थे। शराब पीने वालों, मांस खाने वालों, रिश्वत लेने वालों आदि से लोग घृणा किया करते थे। ऐसे कर्म लोग बड़े छुप-छुप कर, चुपके-चुपके किया करते थे। बच्चों को शुरू से श्रेष्ठ विचार, सदाचार, श्रेष्ठ संस्कार देने का कार्य प्राय: माता-पिता एवं अध्यापकों की वरीयता रहा करती थी।

धीरे-धीरे समय बदला, समाज ने करवट ली, पश्चिमी सभ्यता का संक्रमण हुआ, धन कमाने की आशा में कुछ भी, कैसा भी कर्म करने की वृत्ति उत्पन्न हुई, अनुशासन का स्थान स्वेच्छाचारिता, उच्छृंखलता, कामुकता, नग्नता, नशाखोरी, व्याभिचार आदि ने ले किया और सारे समाज का वातावरण दूषित हो गया, विषाक्त हो गया। मैंने जो अपने विद्यालय की बात लिखी है वह कोई बहुत पुरानी नहीं है, लगभग 40-42 वर्ष पूर्व की है, अर्थात् 60 के दशक एवं 70 के अर्धदशक की ही है। मात्र चार पांच दशकों में इतना परिवर्तन हुआ देखकर आने वाले समय का अनुमान करके ही भय लगने लगता है। आखिर किस ओर जा रहे हैं हम? कैसा समाज बना रहे हैं? आने वाली संतानों के लिए क्या छोड़ कर जायेंगे जिस पर वे गर्व कर सकें? क्या आदर्श होंगे उनके और प्रश्न आकर खड़ा हो जाता है कि देश की रक्षा कौन करेगा? यह जयघोष जब मन में आता है तो आज के परिवेश में यह अधूरा रह जाता है। इसका उत्तर, इसका दूसरा भाग मौन है। वहाँ एक सन्नाटा, एक अभाव दिखाई देता है। पहले यह एक जयघोष हुआ करता था, आज प्रश्न है। क्यों हम लोग इतने स्वार्थी हो गए हैं कि अपने से भिन्न कुछ देखना ही नहीं चाहते? तब के वातावरण और आज के वातावरण की तुलना जब हम करने बैठते हैं, तो उस समय के वे अभाव, वे कष्ट, वे सीमित साधन, वह सादगी आज की चकाचौंध पर, सुविधाओं पर, सुख साधनों पर भारी पड़ती दिखाई देती है। यह ठीक है कि हमने भौतिक उन्नति बहुत की। कच्चे मकानों के स्थान पर पक्के एवं बहुमंजिले भवन, सड़कें,

सरपट भागती गाड़ियाँ, फर्राटेदार अंग्रेजी बोलते बच्चे, मोबाईल, कम्प्यूटर, इंटरनेट, बड़े-बड़े शॉपिंग मॉल आदि न जाने क्या-क्या आ गए हैं परंतु बहुत कुछ ऐसा खो भी गया है जो बहुत आवश्यक था, छूटना नहीं चाहिए था। उसके लिए क्या कभी हम बैठ कर सोचते हैं? उसे स्थापित करने हेतु कोई कार्य करते हैं? कुछ समय का दान देते हैं? वे कौन से साधन हैं जो समाज को विकृत एवं विषाक्त कर रहे हैं। समाज में हिंसा, चोरी, लूट, हत्या, बलात्कार, अनुशासनहीनता, भ्रष्टाचार, पाखंड, अंधविश्वास क्यों बढ़ रहा है? वैसे तो इसके बहुत सारे कारण हैं परंतु हमने इनको कुछ बिंदुओं में समेटने का प्रयास किया है।

**1. पश्चिम की भोगवादी संस्कृति का अंधानुकरण:-**

पश्चिम की यह संस्कृति वास्तव में संस्कृति न हो कर बहुत बड़ी विकृति है। क्योंकि संस्कृति तो सुधार का, उत्थान का, शांति का काम किया करती है परंतु यह विचारधारा गुणों का काम तमाम कर रही है। भयंकर बिगाड़, पतन और अशांति को जन्म दे रही है। इसमें सबसे भयंकर दोष है स्वार्थ की प्रवृत्ति। अपने सुख के लिए यदि लाखों व्यक्तियों का भी गला काटने की आवश्यकता पड़े तो निसंकोच काट डालना, योग्यतम की जय और आत्मा को न जान कर केवल शारीरिक स्तर पर जीना। इसकी तृप्ति जैसे भी हो सके, करने में कोई भी कोर कसर शेष न रखना। हमारे देश ही नहीं अपितु संसार के अधिकतर देशों में जहाँ-जहाँ पश्चिम की इस भोगवादी संस्कृति ने पांव पसारे वहाँ-वहाँ कलह-क्लेश, स्वेच्छाचारिता, कामुकता आदि दुर्गुण स्वयमेव आ गए। बाबू देवेंद्रनाथ मुखोपाध्याय महर्षि दयानंद जीवन चरित्र की भूमिका में बड़ी वेदना के साथ लिखते हैं-

'यूरोप अनार्ष ज्ञान का गुरु और प्रचारक है।-- यूरोप तूने प्रधानत: दो शिक्षाओं का सहारा लिया है, तूने विशेषत: दो सिद्धांतों पर अपनी समाज प्रणाली और सभ्यता के जीवन की स्थिति और उन्नति स्थापित की है। इसमें पहला है क्रमोन्नति (Evolution) और दूसरा है- योग्यतम की जय (Survival of the Fittest)। इन दोनों सिद्धांतों के द्वारा तूने जो संसार का अनिष्ट किया है हम उसे यहाँ कहना नहीं चाहते। योग्यतम की जय का नाम लेकर तू सहज ही दुर्बल के मुख से भोजन का ग्रास निकाल लेता है। सैंकड़ों मनुष्यों को अन्न से वंचित कर

**आज समाज में जो समस्याएँ हैं उनमें से अधिकतर की जनक यह पश्चिमी विचारधारा ही है जो मनुष्य का सर्वस्व हरण करके उसे भोगोन्मुख कर देती है और कुछ भी सोच विचार करने योग्य छोड़ती ही नहीं है।**

देता है। एक-एक करके सारी जाति को निगृहीत, निपीड़ित और नि:सहाय कर देता है। तब तू बिजली के प्रकाश से प्रकाशित कमरे में संगमरमर से मंडित मेज के चारों और अर्धनग्ना सुंदरियों को लेकर बैठता है, उस समय यदि तेरे भोजन, सुख और सम्भाषण के लिए दस मनुष्यों के भी सिर काटने की आवश्यकता हो तो अनायास ही तू उन्हें काट डालेगा। क्योंकि तेरी तो शिक्षा यही है कि योग्यतम की जय होती है। यूरोप! आसुरी व अनार्ष शिक्षा तेरे रोम-रोम में भरी हुई है। अपनी अतर्पणीय धन लालसा को पूरी करने के लिए तू एक दो नहीं, दस मनुष्य नहीं, सौ मनुष्य नहीं बल्कि बड़ी से बड़ी जाति को भी विध्वस्त कर डालता है। अपनी दुनिवार्य भोग तृष्णा की तृप्ति के लिए तू केवल मनुष्यों को ही नहीं वरन् पशु-पक्षी और स्थावर जंगम तक अस्थिर और अधीर कर डालता है। अपनी भोगविलास पिपासा की तृप्ति के लिए तू लाखों मनुष्यों के सुख और स्वतंत्रता का सहज ही में हरण कर लेता है। तेरे कारण पृथ्वी सदा ही अस्थिर और कम्पायमान रहती है।

यूरोप! तरे पदार्पण मात्र से शांति देवी मुंह छिपाकर पलायमान हो जाती है। भूमंडल के जिस स्थल में तेरे कदम जाते हैं, जिस राज्य पर अधिकार हो जाता है वह स्थल और वह राज्य सुखशून्य और शांतिशून्य हो जाता है। जिस स्थान पर तू अपनी जय पताका फहराता है उस स्थान में सौ प्रकार की विशृंखलता आकर उपस्थित हो जाती है। जिस देश में तेरे शिक्षा मंदिर का द्वार खुलता है, उस देश को वञ्चना प्रतारणा, कपट और मुकद्दमेबाजी के जाल में फांस लेता है, जिस-जिस स्थान में तेरे धूमरथ (रेल) का नाद प्रतिध्वनित होता है वहीं दुर्भिक्ष और अनावृष्टि पिशाचनी के डेरे लग जाते हैं। जिस भूमि में तेरे नहरों की जलधारा बहती है उस भूमि में नाना प्रकार की आधि-व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। जिस जनपद को तेरे कारखानों की चिमनियों से निकला धुआं आच्छादित करता है वह जनपद भोगेच्छा का आगार बन जाता है, इससे

अधिक हम क्या कहें?'

देखा आपने! पश्चिम ने संसार को क्या दिया है? वह विषाक्त विचारधारा जो कि सारे विश्व को विषैला बनाने के लिए अपने विषैली वायु उगल रही है।

प्रिय पाठकवृंद! आज समाज में जो समस्याएँ हैं उनमें से अधिकतर की जनक यह पश्चिमी विचारधारा ही है जो मनुष्य का सर्वस्व हरण करके उसे भोगोन्मुख कर देती है और कुछ भी सोच विचार करने योग्य छोड़ती ही नहीं है। ऐसा नहीं है कि हम भोग को बुरा मानते हैं परंतु भारतीय संस्कृति में भोग का उद्देश्य या परिणाम था त्याग। गृहस्थाश्रम में भोगों को भोगा। किसलिए? उसके उपरांत वानप्रस्थ लेकर त्याग करने के लिए। यह बात आज लोगों को हास्यास्पद लगती है। इसलिए कि हमारी मनोवृत्ति बदल गई है। हमारी सोच का मूल आधार/ढांचा लड़खड़ा गया है। हम कभी भोग से उपराम होना ही नहीं चाहते। नहीं तो यह कठिन कार्य न था। इस भोगवृत्ति ने, जो केवल इसी को जीवन का अंतिम उद्देश्य समझती है, मनुष्य में पाशविक वृत्ति उत्पन्न कर दी है। ऐसे भोगों की कोई सीमा, कोई मर्यादा नहीं है। जब मनुष्य इनमें डूब जाता है तो वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकता है। इसमें कुछ अधिक आनंद नहीं आया कुछ नया चाहिए। अपनी पत्नी अब आकर्षक नहीं रही तो दूसरों की चाहिए। उसके पश्चात कुंआरी चाहिए। फिर छोटी-छोटी बच्चियों तक पहुँच गया। सहमति से न सही बालात्कार ही सही। क्या यह अति घृणित उच्छृंखल वृत्ति के वशीभूत होकर किए गए कार्य नहीं हैं। विचार करें। इस विचारधारा ने ऐसे भयानक रोगों को जन्म दिया है कि जिनसे आने वाला समाज भंयकर रूप से पीड़ित होकर कष्ट भोगेगा।

एक और भयंकर दोष जो भोगवादी संस्कृति का है वह है, नग्नता एवं कामुकता। कहाँ इस देश की वे महान नारियाँ जिन्होंने पापियों के हाथों में पड़ने की अपेक्षा जौहर व्रत करना स्वीकार किया और कहाँ आज की यह फैशन की मारी हुई कामुकता की प्रतिमूर्ति। शरीर के ऊपर से प्रतिदिन घटते हुए कपड़ों को आज प्रगतिशीलता का प्रमाण माना जाता है और अपने आपको हॉट और सैक्सी कहलाने पर जिन्हें प्रसन्नता होती है उन्हें बलात्कार पर आपत्ति क्यों? जब भी इस विषय पर चर्चा होती है तो एक बात बड़े जोर-शोर से बोली जाती

**सत्य तो सत्य है। वह किसी को बुरा लगे या अच्छा। खेद है कि आज बुरे कार्य करने वाले बुरे नहीं हैं, बुरे वे हैं जो बुरे को बुरा कहते हैं।**

है कि समाज की मानसिकता बदलो। मानसिकता बदलेगी कैसे यह कोई नहीं बताता। हम तो ऐसे ही नग्न बन कर घूमेंगी, पुरुष वर्ग अपनी मानसिकता बदले। क्या ऐसे ही अपराध रुक जायेंगे। बदलने की आवश्यकता क्या केवल पुरुषों को ही है?

हम बलात्कारियों के घोर विरोधी हैं, उनके लिए कठोर से कठोर दंड के पक्षधर हैं। परंतु क्या नारियों को कामुकता की मूर्ति बनकर घूमने से भी कोई रोकेगा कि नहीं? जगह-जगह अश्लील पोस्टर, विज्ञापन और कला के नाम पर देह प्रदर्शन-- इसका भी कोई उपचार होना चाहिए या नहीं? फिल्मों में काम करने वालियों को आज हीरोईन के नाम से जाना जाता है। हीरो का अर्थ है- योद्धा, नेता, अग्रता से कार्य करने वाला। हीरोईन का अर्थ इन्हीं भावों से युक्त स्त्रीलिंग हुआ। फिर क्या ये लक्षण उन तथाकथित हीरोईनों में घटते हैं? चलो यह भी माना कि उन्हें तो यह सब करने के लिए मोटी धनराशि मिलती है। ये जो गलियों, बाजारों एवं घरों में उनकी प्रतिकृति बन कर घूमती हैं उन्हें क्या मिलता है? विद्यालय में जाने वाली बच्चियाँ भी यदि ब्यूटी पार्लर जाकर संजने संवरने का कार्य करती हैं तो किसे दिखाने के लिए? देखो! जब हम कोई भी कार्य ऐसा करते हैं जिसमें स्वेच्छाचार भरा हुआ हो तो उसके परिणाम भी भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए। अपना आचरण सुधारने की अपेक्षा हम परिणाम से बचना चाहते हैं। हम जानते हैं कि हमारे उपर्युक्त कथन से कई प्रगतिवादियों के विचारों को धक्का पहुँचेगा, परंतु सत्य तो सत्य है। वह किसी को बुरा लगे या अच्छा। खेद है कि आज बुरे कार्य करने वाले बुरे नहीं हैं, बुरे वे हैं जो बुरे को बुरा कहते हैं।

भोगवादी स्वेच्छाचार का एक भाग नशा है। शराब, अफीम, स्मैक, ब्राऊन शूगर, सुल्फा तथा अन्य ड्रग्स जो कि लेने वाले की सोचने समझने की शक्ति समाप्त करके उसे भयानक से भयानक कर्म करने के लिए विवश कर

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

# श्रीकृष्ण : वंश, जन्मस्थान और समय

❑मनुदेव अभय विद्यावाचस्पति

यूनानी यात्री मैगस्थनीज ने मथुरा का वर्णन करते हुए लिखा है– 'यहाँ शौरसैनी लोग रहते हैं और वे हीराक्लीज की पूजा करते हैं।' ये हीराक्लीज स्पष्टतया श्रीकृष्ण ही हैं। इनके समय के संबंध में यवन यात्री उस समय के साक्षियों के आधार पर आगे लिखता है कि वे डायोनीसियस से १५ पीढ़ियाँ पीछे हुए।

भारत में ययाति नाम के एक बहुत पुराने राजा हुए हैं। शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी उनकी पत्नी थी। उससे उनके दो पुत्र हुए– यदु और तुर्वसु। यदु का वंश जिसमें श्रीकृष्ण हुए, यादव वंश कहलाता है। इसी वंश के एक राजा हुए मधु। उनकी संतान माधव कहलाई। मधु के एक वंशज सात्वत हुए। उनसे पीछे उसी कुल का नाम, जिसे उनसे पूर्व यादव और माधव कहते आए थे, सात्वत पड़ा। दूसरे शब्दों में यादव, माधव और सात्वत एक ही वंश के तीन भिन्न भिन्न नाम हैं। सात्वत के पुत्रों में से अंधक और वृष्णि दो उपवंशों के चलाने वाले हुए। वृष्णि की संतान वृष्णि या वार्ष्णेय कहलाई। अंधक का एक और नाम महाभोज था। इससे उनके वंश का नाम भोज हुआ। अंधक के दो पुत्र हुए कुकुर और भजमान। कुकुर की संतति का नाम भी कुकुर पड़ा। और भजमान की संतति भजमान के पिता अंधक के नाम से अंधक ही कहलाती रही। इस प्रकार यादव वंश के दो उपवंश हो गए– एक वृष्णि, दूसरे भोज। भोजों के फिर दो भेद हुए– एक कुकुर दूसरे अंधक।

श्रीकृष्ण वृष्णियों में से थे। इनके दादा का नाम था शूर। शूर का बड़ा लड़का वसुदेव था। वसुदेव के कई लड़के और लड़कियाँ हुईं। इन्हीं में हमारे चरित्र नायक श्रीकृष्ण विशेष उल्लेखनीय हैं।

श्रीकृष्ण की मां का नाम देवकी था। वे कुकुर वंश की थी। यादवकुल का राज्य उस समय कुकुरों के हाथ में था। देवकी के पिता थे देवक। जिनका भाई उग्रसेन राज्य का अधिकारी था। उग्रसेन को उसके पुत्र कंस ने सिंहासन से उतारकर स्वयं राज्य संभाल लिया था। स्मरण रहे, यादवों के केवल दो मुख्य कुलों का वर्णन ऊपर किया गया है। क्योंकि इन वंशों का प्रस्तुत चरित्र से विशेष संबंध है। वस्तुतः इन वंशों की संख्या १७ थी। और इन कुलों में १८००० पुरुष थे।

यादवों की राजधानी मथुरा थी। जरासंध के निरंतर आक्रमणों से तंग आकर श्रीकृष्ण की सलाह से इन्होंने मथुरा छोड़ दी और समुद्र के किनारे पश्चिम में जा डेरा किया। यदि मथुरा में आम्रकुंजों की बहार थी तो द्वारिका में भी चारों ओर हरियाली ही हरियाली नजर आती थी।

रैवतक पहाड़ ने जिसे आजकल गिरनार कहते हैं, द्वारिका की शोभा बढ़ा रखी थी। प्रकृति की गोद में पले सौन्दर्यप्रिय श्रीकृष्ण कहते हैं– 'यह सोचकर हम सब पश्चिम दिशा में सुन्दर कुशस्थली में, जिसे रैवत पर्वत ने और भी रमणीय बना दिया है, जा बसे। (सभा पर्व १४ –५८, ५९) संप्रति द्वारिका का बहुत ही महत्त्व है। यह पश्चिम का महत्त्वपूर्ण द्वार है।

वृष्णियों के घरेलू व्यवहार का वर्णन महाभारत में इस प्रकार किया गया है– ' वृद्धों की आज्ञा में चलते हैं। अपने भाई बंधों का अपमान नहीं करते। ब्राह्मणों, गुरु और सजातीय के धन के प्रति अहिंसा वृत्ति रखते हैं। धनवान् होकर भी अभिमान रहित हैं। ब्रह्म के

उपासक और सत्यवादी हैं। समर्थों का मान करते हैं और दीनों को सहायता देते हैं। सदा देवोपासना में रत, संयमी और दानशील रहते हैं। डींगें नहीं मारते। इसीलिए वृष्णिवीरों का राज्य नष्ट नहीं होता। (द्रोण पर्व २४-२८)

यादवों की राज्य शैली संघ के ढंग की थी। ये किसी राजा की आज्ञा पर न चलते थे, किन्तु सभी का राज्य के निर्णयों में मत होता था। उनका राष्ट्र स्वतंत्र था, किसी के दबाए दब न सकता था। इस वीर जाति का प्रत्येक व्यक्ति भी अपनी वैयक्तिक स्वतंत्रता छोड़ने को सहसा तैयार न था। इससें संघ के नायकों को कष्ट अवश्य होता था पर क्षत्रियों की आन को धब्बा न लगता था। इस आन का सबसे उज्ज्वल आदर्श यह था कि जो श्रीकृष्ण के लड़के प्रद्युम्न ने सौम्य नगर (वर्तमान अलवर राजस्थान) के राजा शाल्व की लड़ाई में अपने सारथि दारक से कहा था- 'वह वृष्णिकुल में नहीं पैदा हुआ, जो रण में पीठ दिखाए। या जो गिरे हुए पर आक्रमण करे, या जो स्त्री, बच्चे अथवा बूढ़े पर प्रहार करे। अथवा रथ से विहीन, गिर गए या उस पर जिसका शस्त्र टूट गया है, प्रहार करे।' यह युद्ध का नियम था, अनुशासन था।

ऐसे कुल और ऐसे स्थान को हमारे चरित्र नायक ने अपने देवोपम जन्म से सुशोभित किया। उनके जन्म का समय हमारी परम्परागत काल गणना के अनुसार आज से प्राय: ५००० वर्ष पूर्व है। महाभारत का युद्ध कलियुग के आरम्भ में हुआ था। और कलियुग के आरम्भ का समय भारतीय ज्योतिषियों ने ५००० वर्ष पूर्व निश्चित किया है।

यूनानी यात्री मैगस्थनीज ने मथुरा का वर्णन करते हुए लिखा है- 'यहाँ शौरसैनी लोग रहते हैं और वे हीराक्लीज की पूजा करते हैं।' ये हीराक्लीज स्पष्टतया श्रीकृष्ण ही हैं। इनके समय के संबंध में यवन यात्री उस समय के साक्षियों के आधार पर आगे लिखता है कि वे डायोनीसियस से १५ पीढ़ियाँ पीछे हुए। डायोनीसियस से चन्द्रगुप्त तक- जिसके वहाँ वह दूत बनकर आया था, उसके कथनानुसार १५३ पीढ़ियों का अंतर है।

अर्थात् श्रीकृष्ण चन्द्रगुप्त से १५३-१५=१३८ पीढ़ियाँ पूर्व हुए। ऐतिहासिकों की प्रथा का अनुसरण करते हुए प्रत्येक पीढ़ी को बीस वर्ष का समय दे दिया जाए तो यह अंतर १३८ गुणा २०=२७६० वर्ष निश्चित होता है। यह हुआ श्रीकृष्ण से चन्द्रगुप्त के बीच का समय। चन्द्रगुप्त ईसा से ३१२ वर्ष पूर्व हुआ था, और अब ईसवी सन् २०१४ है, इस प्रकार श्रीकृष्ण को हुए आज तक २७६०+३१२+२०१४ =५०८६ वर्ष हुए हैं। इससे प्रतीत होता है कि उक्त परम्परागत गणना आज ही की चलाई हुई नहीं, किन्तु चन्द्रगुप्त के समय अर्थात् आज से प्राय: अढ़ाई हजार वर्ष पूर्व भी यही गणना प्रचलित थी। संभव है उस समय इस गणना की कुछ और भी ऐतिहासिक साक्षियाँ रही हों, जो आज उपलब्ध नहीं होतीं।

# मेरा देश महान

❒सेवासिंह वर्मा
पूठ खुर्द, दिल्ली

परमपिता के आशीर्वाद से है मेरा देश महान।
युवा प्रतिभा की है दुनिया में पहचान।।
हर दिल में हो प्रेम भरा, और आँखों में अब रहे शर्म।
अलग-2 न बटें कभी हम, सबका हो अब सहज धर्म,
बन पुरुषार्थी करें कर्म- 2
हो चेहरे पर मुस्कान---
युवा प्रतिभा की है, दुनिया में पहचान।।

घूस खोरी पर लगा हो अंकुश, सुधर जाएँ भ्रष्टाचारी,
व्यभिचार को नष्ट करें, हो दण्डित हर अत्याचारी।।
यहाँ पूजी जाए फिर नारी-2
करें सभी मान-सम्मान---
युवा प्रतिभा की है, दुनिया में पहचान।।

वस्त्रहीन न हो जन कोई, न बच्चा कोई रहे भूखा,
बाढ़ न आए अब किसी नगर में, न खेत रहे कोई सूखा,
करे निवारण कृषक दु:ख का-2
हरियाली की शान---
युवा प्रतिभा की है, दुनिया में पहचान।।

गाँधी पटेल की धरती पर, अब आतंकवाद का भी हो अंत,
सुख शांति हो चहुँ ओर, अब आपस में हो प्यार अनन्त।।
मार्गदर्शी हों सभी संत -2
करे मानव का उत्थान---
युवा प्रतिभा की है, दुनिया में पहचान।।

इतिहास-कथा

# वीरवर दुर्गादास राठौड़

□**राजेशार्य आट्टा,** 1166, कच्चा किला, साढौरा, यमुनानगर-१३३२०४

राणा सांगा का बड़ा भाई था पृथ्वीराज, जिसका युवावस्था में ही देहान्त हो गया था। इन्हीं का अनौरस पुत्र था बनवीर। यह स्वभाव से बड़ा ही दुष्ट और षड्यंत्रकारी था। इसीलिए महाराणा रतनसिंह ने इसे मेवाड़ से निकाल दिया था। उनकी मृत्यु (1531 ई0) के बाद यह फिर से चित्तौड़ आने में सफल हो गया और विक्रमादित्य की अयोग्यता का लाभ उठाकर प्रधानमंत्री बन बैठा। इसने अपनी शक्ति बढ़ाई और अवसर देखकर एक रात 19 वर्ष के राणा विक्रमादित्य को मार दिया। फिर वह उदय सिंह को मारने के लिए चल पड़ा। उदय सिंह की धाय पन्ना को हत्यारे बनवीर के विषय में पता चल गया। उसने उदयसिंह को चित्तौड़ के गढ़ से सुरक्षित बाहर भेज दिया और उसके पलंग पर अपने पुत्र चन्दन को लिटा दिया। जब बनवीर ने आकर उदय सिंह के बारे में पूछा तो पन्ना ने अपने पुत्र की ओर संकेत कर दिया। रात का समय था, बनवीर ने तलवार से पन्ना के सोते हुए पुत्र को मार डाला। बाद में पन्ना उदयसिंह को लेकर देवलिया प्रतापगढ़, डूँगरपुर, कुम्भलगढ़ आदि स्थानों पर गई। 1540 ई. में बनवीर को हराकर उदयसिंह मेवाड़ का राणा बना। अपने महान त्याग से पन्ना धाय ने इतिहास में अमर स्थान प्राप्त कर लिया।

**यह देश महान जहाँ हमने नर में नारायण को देखा,**
**आसू के छोटे दोहे में, पूरी रामायण को देखा।**
**जग मानवता के पुष्प कुचल देता सिंहासन पाने को,**
**हम सिंहासन ठुकरा देते, जग के आंसू पी जाने को।।**

मारवाड़ के राठौड़ वीरों ने भी दुर्गादास राठौड़ के नेतृत्व में ऐसा ही इतिहास रचा, महाराजा जसवंतसिंह के शिशु अजितसिंह को दिल्ली की नजरबन्दी से निकाल मारवाड़ की गद्दी पर बैठाकर। दुर्गादास की योजना के अनुसार राज परिवार की धाय रूपा की बेटी गोरा टांक ने अपने शिशु को अजितसिंह के स्थान पर लिटा दिया और मालिन के वेश में अजितसिंह को टोकरे में रखकर बाहर ले गई। वहाँ सपेरे के वेश में बैठे मुकुन्ददास खींची की झोली में डाल दिया। वह बीन बजाता मारवाड़ की ओर चल दिया।

औरंगजेब ने राजपूतों के साथ दुर्व्यवहार किया तो वे भड़क उठे और भाटी सरदार रघुनाथ के नेतृत्व में शाही सेना पर भयानक आक्रमण कर दिया। शाही सैनिक घबरा उठे। क्षणिक घबराहट का लाभ उठाकर दुर्गादास और वफादार घुड़सवारों का दल पुरुष वेशी दोनों रानियों के साथ निकल गए और मारवाड़ की ओर बढ़ने लगे। डेढ़ घण्टे तक रघुनाथ भाटी दिल्ली की गलियों को रक्तरंजित करता रहा। किंतु अंत में वह अपने 70 वीरों के साथ मारा गया। दुर्गादास के भागने की सूचना पाकर शाही घुड़सवारों ने उनका पीछा किया। मार्ग में उन्हे रणछोड़दास जोधा ने रोक लिया। उसका दल अंतिम सांस तक उनसे लड़ता रहा। इसके बाद दुर्गादास ने पीछा करने वालों का सामना किया। वहाँ भयानक युद्ध हुआ। मात्र सात घायल सैनिकों के साथ दुर्गादास मारवाड़ की ओर बढ़ा।

औरंगजेब ने 'जजिया' कर लगा दिया और राठौड़ सरदारों में फूट डालने के लिए अमरसिंह राठौड़ के पोते नागौर के इन्द्रसिंह को 36 लाख रूपये लेकर जोधपुर का राजा बना दिया। दुर्गादास ने अजितसिंह को मुकुन्ददास खींची के संरक्षण में सिरोही की पहाड़ियों में रखा। बाद में मेवाड़ के महाराणा राजसिंह से प्रार्थना की गई कि अजित सिंह को अपनी शरण में रख लें। महाराणा ने इसे स्वीकार कर लिया। अजितसिंह को बारह गाँवों सहित केलवे का पट्टा देकर वहाँ रखा और दुर्गादास आदि राठौड़ों से कहा- 'बादशाह सीसोदियों और राठौड़ों के सम्मिलित सैन्य का आसानी से मुकाबला नहीं कर सकता। आप निश्चिंत रहें।'

वीर विनोद के अनुसार ऐसी ही निश्चिंतता राणा ने वल्लभ सम्प्रदाय के मुख्य गोसाईं दामोदर को दी थी, जब वह गोवर्धन पर्वत पर स्थित मुख्य मंदिर की श्रीनाथजी की मूर्ति को लेकर औरंगजेब के डर से मेवाड़ पहुंचे थे। राणा ने उन्हें निर्भीकता से शरण देकर कहा- 'जब मेरे एक लाख राजपूतों के सिर कट जाएँगे, तभी आलम गीर इस मूर्ति को हाथ लगा सकेगा।'

जब औरंगजेब को पता चला कि अजितसिंह महाराणा के पास है, तो उसने महाराणा के पास फरमान भेजकर अजित सिंह को मांगा, परन्तु महाराणा ने उस पर ध्यान न दिया। फिर दोबारा फरमान भेजा परन्तु महाराणा ने अजित सिंह को सौंपना स्वीकार नहीं किया। इसके परिणाम की चर्चा पहली पंक्तियों में की जा चुकी है।

औरंगजेब ने अपने बेटे अकबर व राजपूतों में फूट डालने के लिए जाली पत्र लिखे। दुर्गादास ने अकबर को शम्भाजी के पास सुरक्षित भेज दिया। इससे पहले कि अकबर मराठों की सहायता प्राप्त करके राज्य की शान्ति भंग करे , सम्राट ने मेवाड़ के महाराणा जयसिंह से सन्धि (24 जून, 1681 ई0) कर ली। मेवाड़ के साथ मुगलों की सन्धि होने के बाद अजितसिंह को उदयपुर से सिरोही ले जाया गया। राठौड़ों ने मुगलों के इलाकों को लूटना जारी रखा। सितंबर 1681 में महाराणा के भाई भीमसिंह ने उनमें सन्धि करवाने का प्रयत्न किया, पर राठौड़ सोनिंग की मृत्यु होने से बात बीच में रह गई। राठौड़ ने अपना गुरिल्ला युद्ध जारी रखा। उधर दक्षिण में, शाहजादे अकबर के साथ रहकर दुर्गादास ने पीछा करने वाले शाही अफसरों के साथ लड़कर बड़ी वीरता दिखलाई। मारवाड़ के वीरों का पत्र पाकर दुर्गादास दक्षिण से रवाना होकर रतलाम पहुँचा और जोधा अखैसिंह रत्नसिंहोत को साथ लेकर शाही प्रदेशों में आक्रमण करने लगा। सिरोही में गुप्त रूप में रह रहे अजितसिंह को प्रकट कर पीपलोंद के पहाड़ों में भेज दिया।

दुर्गादास के मारवाड़ में पहुँचने से राठौडों का उत्साह बहुत बढ़ गया। वे जहाँ-तहाँ शाही सेना को तंग करने लगे। बादशाह ने परेशान होकर शाही सेना भेजी। सिवाणा पर मुगलों का अधिकार होने से अजित सिंह को छप्पन के पहाड़ों में ले जाया गया। वहाँ महाराणा जयसिंह ने उसे आश्रय दिया। 1690 ई. में दुर्गादास ने अजमेर के हाकिम सफीखाँ पर आक्रमण कर उसे अजमेर की तरफ भागने पर बाध्य किया। शाहजादे अकबर ने दक्षिण में जाने से पूर्व अपने पुत्र बुलन्द अख्तर और पुत्री सफीयतुन्निसा को दुर्गादास के पास ही छोड़ दिया। 1692 में सफीखाँ ने राठौड़ों से मेल-जोल कर दुर्गादास से उन्हें बादशाह को सौंपने की कही पर दुर्गादास इसके लिए तैयार नहीं था। राठौड़ों ने जोधपुर, जालोर, सिवकोटड़ा और पोहकरण आदि स्थानों से कर वसूली की। जोधपुर से कासिम बेग आदि ने उनका पीछा किया, पर वे उनका कुछ न बिगाड़ सके और उन्हें वापिस लौट जाना पड़ा। अगले वर्ष कासिम खाँ और लश्कर खाँ ने अजित सिंह पर चढाई की। दुर्गादास के पुत्र ने उनका सामना कर उन्हें हराया।

1696 में अजितसिंह उदय पुर आ गया। वहाँ महाराणा ने अपने भाई गजसिंह की पुत्री की शादी उसके साथ की और 9 हाथी, 150 घोड़े आदि बहुत सा सामान दहेज में दिया। इससे औरंगगजेब का उसके जाली होने का शक जाता रहा। अकबर के बेटे-बेटियों को प्राप्त करने के लिए औरंगजेब ने शुजात खाँ के माध्यम से ईश्वरदास ब्राह्मण को कई बार दुर्गादास के पास भेजा। दुर्गादास ने सफीयतुन्निसा को औरंगजेब के पास भेज दिया। बादशाह यह जानकर हैरान हुआ कि दुर्गादास ने उसकी महजबी शिक्षा के लिए अजमेर से मुसलमान शिक्षिका बुलाकर रख दी थी। प्रसन्न होकर औरंगजेब ने दुर्गादास का मनसब निर्धारित कर मासिक वेतन भी निश्चित कर दिया, पर जोधपुर का राज्य अजीतसिंह को न देने के कारण दुर्गादास ने वह मनसब लेने से मना कर दिया।

लगभग दो वर्ष बाद अजीत सिंह की इच्छा को देखते हुए दुर्गादास ने अपनी माँगों में कमी कर दी। बादशाह ने अजीतसिंह को मनसब प्रदान कर जालोर, सांचोर और सिवाणा की जागीर दी, जहाँ का वह फौजदार भी नियत किया गया। दरबार में उपस्थित होने पर दुर्गादास को 3000 का मनसब, एक रत्न जड़ित कटार, एक स्वर्णपदक, मोतियों की माला और शाही खजाने से एक लाख रुपए दिये गये। पाटण (बड़ौदा) का फौजदार नियतकर उधर भेज दिया गया। 1698-1701 ई. तक तो कुछ शांति रही, पर 1701 ई. में बादशाह द्वारा बार-बार बुलाए जाने पर भी अजीतसिंह उसके पास नहीं गया, क्योंकि दुर्गादास को मारवाड़ से दूर रखने से उसके मन में सन्देह हो गया था। बादशाह ने अपने बेटे मुहम्मद आजम को दुर्गादास को कैद करने या मारने के लिए भेजा। उसके छल को जानकर दुर्गादास मारवाड़ की तरफ चल पड़ा। पाटण के मार्ग में मुगल सेना उनके निकट पहुँच गई, तो दुर्गादास के पौत्र (तेजकरण का पुत्र) अनूपसिंह ने दुर्गादास को भाग जाने का मौका दिया और स्वयं राठौड़ वीरों के साथ वीरतापूर्वक मुगल सेना का मार्ग रोकते हुए वीरगति को प्राप्त हो गया। दुर्गादास मारवाड़ में अजीतसिंह से मिलकर खुले रूप से उपद्रव करने लगा। औरंगजेब दिन-प्रतिदिन के झगड़ों से परेशान हो गया था, अत: 1704 ई. में अजीतसिंह को मेड़ता देकर उसने सन्धि कर ली। दुर्गादास का भी मनसब बहाल कर उसकी नियुक्ति गुजरात में पहले वाले स्थान पर कर दी।

मराठों की बढ़ती शक्ति को देखकर ये पुन: विद्रोही हो गये, पर मुगल सेना के कारण दुर्गादास सूरत में दक्षिण के कोलियों देश में चला गया और अजीत सिंह पीछे हट गया। औरंगजेब की मृत्यु (3 मार्च 1707 ई.) की सूचना पाते ही अजीत सिंह ने जोधपुर पर आक्रमण कर अपना अधिकार कर लिया। मुगल सेना मार भगा दी गई। दुर्गादास भी जोधपुर लौट आया। अजीत सिंह ने नई मस्जिदों को तुड़वा दिया। नये बादशाह बहादुरशाह की गद्दीनशीनी के

समय अपना कोई वकील भी नहीं भेजा। इससे नाराज होकर बहादुरशाह ने मारवाड़ पर आक्रमण कर दिया। जयपुर के सवाई जयसिंह (मुगलों के सेवक) के साथ अजीतसिंह शाही सेवा में उपस्थित हुआ। उन्हें मनसब तो मिले, पर राज्य नहीं मिले। ऐसी अवस्था में उन दोनों ने दुर्गादास के साथ उदयपुर की ओर प्रस्थान किया। महाराणा अमर सिंह (जयसिंह का पुत्र) ने 30 अप्रैल 1708 को उनका स्वागत किया। मेवाड़, मारवाड़ और आमेर ने प्रण किया कि अब वे मुगल सम्राट् की अधीनता न मानेंगे, शाही खानदान में अपनी बेटियाँ नहीं देंगे। इसके बाद महाराणा ने अपने दो अफसरों की अध्यक्षता में अपनी सेना उन्हें दी। तीनों की सम्मिलित सेना ने जोधपुर को जा घेरा। दुर्गादास के बीच में पड़ने से जोधपुर का मुगल फौजदार मेहराब खाँ किला खाली करके चला गया। महाराजा अजीतसिंह मारवाड़ के राज सिंहासन पर बैठे। इसके बाद दुर्गादास और अजीत सिंह सेना लेकर सवाई जयसिंह के साथ सांभर (आंबेर-आमेर) को प्राप्त करने चल पड़े। यद्यपि जयसिंह के दीवान मुहता रामचन्द्र ने उस पर आक्रमण कर उसे जीत लिया था, पर आंबेर का फौजदार सैयद हुसैन खाँ पुन: कब्जा करने आ पहुँचा। 3 अक्तूबर 1708 ई. को सांभर के इस भाग्य निर्णायक युद्ध में मुगलों के विरुद्ध राजपूतों की ओर से दुर्गादास राठौड़ ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सैयद हुसैन और उसके सारे मुख्य सरदार युद्ध के अंतिम चरण में मारे गए और राजपूत सेनाओं ने शानदार जीत हासिल की।

अजीतसिंह के क्रूर स्वभाव से शंकित होकर वीर दुर्गादास राठौड़ ने मारवाड़ का परित्याग कर उदयपुर की ओर प्रस्थान किया। महाराणा अमरसिंह ने विजयपुर की जागीर देकर उन्हें अपने पास रखा। बादशाह बहादुरशाह ने महाराणा को लिखा कि वह दुर्गादास को उन्हें सौंप दे, पर महाराणा ने इसे अस्वीकार कर दिया। बाद में दुर्गादास को रामपुरे का हाकिम नियत किया गया। 1710 ई. (दिसम्बर) में संग्राम सिंह महाराणा बना। वह दुर्गादास राठौड़ का न केवल सम्मान करता था, वरन उसकी राजनीतिज्ञता तथा प्रशासनिक क्षमता पर भी उसे पूरा भरोसा था। इसलिए रामपुरा राजघराने के मामलों की उलझी हुई गुत्थी को सुलझाने का नाजुक काम उसने दुर्गादास राठौड़ को सौंपा। उसे बड़ी सफलतापूर्वक सुलझाकर 1717 ई. के अंत में दुर्गादास राठौड़ उज्जैन में क्षिप्रा (शिप्रा) नदी के तट पर रहने लगे और 22 नवम्बर 1718 को लगभग 80 वर्ष की उम्र (जन्म 13 अगस्त 1638 ई.) में महाप्रयाण कर गये।

**ढंबक-ढंबक ढोल बाजै,**
**लागै चोट नगारां री।**
**आशे घर दुरगो नँह होता,**
**सुन्नत होती सारां री।।**

**न तख्त चाहिये न ताज चाहिये।**
**केवल मातृभूमि की लाज चाहिये।।**

शिविरों के लिए बहनों का गीत

# आओ बहनों बनें वाहिनी आर्य राष्ट्र निर्माण की

❑**विमलेश बंसल** मो0 8130586002

सुनते आये रोज कहानी शौर्य त्याग, बलिदान की।
आओ बहनों बनें वाहिनी आर्य राष्ट्र निर्माण की॥
वंदे मातरम्। वंदे मातरम्।।

हम हैं शिक्षित हम हैं दीक्षित हाथों में अखबार लिये।
हम हैं दुर्गा हम हैं काली कांधों पर हथियार लिये।।
असुरों को हम मार गिराएं परवाह न कर जान की॥
आओ बहनों बनें ---

हम अभय सिंहनी करें गर्जना सुन गीदड़ डर जाते हैं।
जो कोई आँख उठाकर देखे बोटी नोच गिराते हैं।।
पले हुए हम उस माटी में जो वीरों के त्राण की॥
आओ बहनों बनें ---

हमने ही उत्तम माता बन ध्रुव प्रह्लाद बनाये हैं।
हमने ही उत्तम माता बन राम और कृष्ण जनाये हैं।।
हमने ही अनसूया माँ बन ईश्वर की पहचान की॥
आओ बहनों बनें ---

सभी क्षेत्र में गूँज हमारी धरती या आकाश गगन।
हमको दी कुदरत ने भारी धैर्य वीरता और लगन।।
हमने ही बनकर के सुनीता अंतरिक्ष उड़ान की॥
आओ बहनों बनें ---

मगर भूल गये वर्षों से हम अपनी ही आजादी को।
महापुरुषों ने हमें बचाकर दूर किया बर्बादी को।
विमल आज उनकी ही खातिर हम सबने मुस्कान दी॥
आओ बहनों बनें ---

*329 द्वितीय तल, संत नगर, पूर्वी कैलाश, नई दिल्ली-110065*

# भारतवर्ष पर हावी होता इण्डिया

❑**प्रो० शामलाल कौशल,** ९७५ बी/ २०, ग्रीन रोड रोहतक-१२४००१

लोग अंग्रेजों की तरह ही खाना, पीना, रहना, बात करना तथा वस्त्र पहनना चाहते हैं। भारत में बेड-टी, कॉफी, पीजा, चाओमिन, बर्गर, समलैंगिकता, लिव इन रिलेशनशिप आदि पश्चिमी देशों का प्रभाव है। जबकि भारतीय संस्कृति हमें साधारण खान-पान, पहनावे तथा पारिवारिक जीवन की शिक्षा देती है।

भारत वर्ष आर्यों का देश है। हमारी एक समृद्ध संस्कृति, सभ्यता तथा परम्परा रही है। हमारे वेद, पुराण, गीता आदि धार्मिक ग्रंथ हमें त्याग, संयम, क्षमा, दान, सेवा, घर-परिवार में मेलजोल, परिश्रम, ईमानदारी, सच्चाई, देशभक्ति, परहित तथा मोक्ष आदि के बारे में बता रहे हैं। भारत का प्राचीन नाम आर्यावर्त है। इसे भारतवर्ष तो भरत के नाम से पुकारा जाता है। अंग्रेजों ने अपने शासन काल के दौरान इसे 'इण्डिया' नाम दिया। अंग्रेजी के शब्दकोश में 'इंडिया' का अर्थ दोषी या लुटेरे के तौर पर बताया गया है। विदेशों में कई बार भारतवासियों को हीनभावना से ग्रस्त करने के लिए ब्लडी इंडियन भी कह दिया जाता है। कहना न होगा कि ६७ वर्षों में हमारे देश ने जो प्रशसंनीय प्रगति की है इसे लेकर पश्चिमी देशों के कई लोग इडियंज को ईर्ष्या की दृष्टि से ही नहीं देखते बल्कि उन पर आक्रमण करते हैं तथा कई बार हत्या भी कर देते हैं। इसके बावजूद हम कभी भी अपने आपको विदेशियों द्वारा इंडिया कहे जाने पर विरोध प्रकट नहीं करते। आज जब बंबई को मुम्बई, मद्रास को चेन्नई, बनारस को वाराणसी, कलकत्ता को कोलकाता, उड़ीसा को ओड़ीसा के बदले हुए नामों से पुकारा जा रहा है, बात समझ से परे है कि हम भारत को भारतवर्ष या आर्यावर्त कहलाये जाने पर बल देकर इंडियन की शर्मिन्दगी से बचने की कोशिश क्यों नहीं करते।

अंग्रेज तो भारत से १९४७ में चले गये थे फिर भी हमारे देश में आज तक अंग्रेजियत बदस्तूर जारी है जो कि हमारी दासता की द्योतक है। भारत मूलतः शाकाहारी देश है। अंग्रेजी शासनकाल में गोहत्या होती थी, मांसाहारी भोजन को बढ़ावा मिला जो आज तक जारी है। भारतवासी गाय को माता मानते हैं, लेकिन इसके बावजूद हमारे देश में हजारों बूचड़खाने हैं, जहाँ गोहत्या होती है तथा लोगों को मांसाहारी भोजन उपलब्ध होता है। बहुत सालों से लोग गौओं की रक्षा हेतु संघर्षरत हैं। यह एक विडम्बना है कि बहुत प्रकार से उपयोगी होने के बावजूद लोग गौओं को घरों में रखने के बदले में कुत्ता रखना पसन्द करते हैं। यह संस्कृति पश्चिमी अंधानुकरण की ही देन है।

संस्कृत देवों तथा वेदों की भाषा है। हमारे महत्त्वपूर्ण धार्मिक ग्रंथ संस्कृत में ही लिखे गये हैं। हिन्दी हमारी राष्ट्रीय भाषा है। देश की स्वतंत्रता का आंदोलन हिन्दी में ही चलाया गया। भगतसिंह का मेरा रंग दे बसंती चोला तथा सुभाष चन्द्र बोस का 'तुम मुझे खून दो, मैं तुझे आजादी दूँगा' नारा भी हिन्दी में ही है। लेकिन आज हमारे पब्लिक स्कूलों, कालेजों तथा यूनिवर्सिटियों में जिस तरह अंग्रेजी हावी हो रही है वह हमें शर्मसार करने वाली है। लोग अंग्रेजों की तरह ही खाना, पीना, रहना, बात करना तथा वस्त्र पहनना चाहते हैं। भारत में बेड-टी, कॉफी, पीजा, चाओमिन, बर्गर, समलैंगिकता, लिव इन रिलेशनशिप आदि पश्चिमी देशों का प्रभाव है। जबकि भारतीय संस्कृति हमें साधारण खान-पान, पहनावे तथा पारिवारिक जीवन की शिक्षा देती है।

हमारी संस्कृति साधारण जीवन तथा उच्च विचारों को बढ़ावा देने वाली है। हमारे यहाँ जोड़ने के बदले दान देना ज्यादा ठीक समझा जाता है। जल्दी सोना तथा जल्दी उठना, शौचादि के लिए खुले में जाना, कुंए के पानी से स्नान करना सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। जबकि पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के कारण आजकल लोग आधी-आधी रात तक टीवी देखते रहते हैं या पार्टियों में जाते रहते हैं। सुबह देर से उठते हैं, म्लेच्छों की तरह बिना हाथ मुंह धोये बेड टी लेते हैं तथा अटैच्ड टायलेट में ही शौचादि के लिये जाते हैं जिससे बीमारियाँ फैलती हैं।

इस तरह भारतवर्ष पर इण्डिया हावी हो रहा है जिससे देश की संस्कृति का विनाश हो रहा है। समय रहते हमें जागना चाहिये। हमें कोशिश करनी चाहिए कि भारतवर्ष भारतवर्ष या आर्यावर्त रहे। इस पर इण्डिया हावी न हो।

हमारे आदर्श पुरुष

# रिश्वत लौटाने वाला पटवारी
# अमर हुतात्मा भक्त फूलसिंह

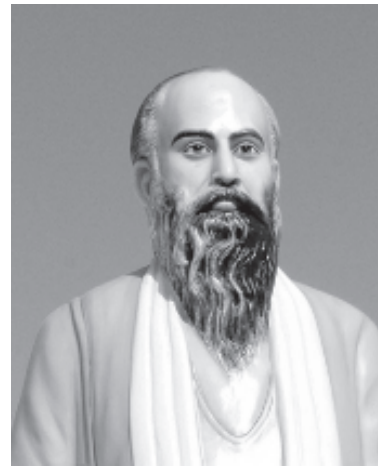

❒सहदेव समर्पित

महात्मा जी ने हरियाणा के ठेठ ग्रामीण क्षेत्र में कन्या गुरुकुल खानपुर की स्थापना केवल तीन ब्रह्मचारिणी कन्याओं के साथ की थी। गुरुकुल का संचालन, जिसका आर्थिक आधार केवल दान हो, उस युग में कोई आसान कार्य न था। किन्तु महात्मा जी की तपस्या के प्रभाव से वह संस्था आज एक स्वतंत्र विश्वविद्यालय का रूप धारण कर चुकी है।

कन्या गुरुकुल खानपुर कलाँ स्त्री शिक्षा में योगदान करने वाली प्रसिद्ध संस्था है। १० नवम्बर सन २००६ को हरियाणा सरकार ने इसके महत्त्व को देखते हुए इसे भक्त फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय का रूप दिया। अब यहाँ पहला महिला मेडिकल कालेज भी स्थापित हो गया है और यह संस्था विश्वविख्यात हो गई है। इस संस्था की स्थापना सन १९३६ में हरियाणा के प्रसिद्ध आर्य नेता महात्मा भक्त फूलसिंह जी ने की थी। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में यह एक क्रान्तिकारी कदम था। इससे पूर्व महात्मा भक्त फूलसिंह भैंसवाल कलां ग्राम में लड़कों के लिए गुरुकुल की स्थापना कर चुके थे। इन दोनों संस्थाओं ने शिक्षा के प्रसार के साथ सामाजिक उत्थान, राष्ट्रीय उन्नति और रूढ़िवाद के उन्मूलन में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

इन संस्थाओं के संस्थापक भक्त फूलसिंह एक अद्वितीय व्यक्तित्त्व के स्वामी थे। रोहतक के गांव माहरा में २४ फरवरी १८८५ को जन्मे फूलसिंह प्रारम्भिक शिक्षा के बाद सींख पाथरी में पटवारी नियुक्त हुए। ग्राम इसराना निवासी चौधरी परीत सिंह पटवारी की संगति में आप के मन पर वैदिक धर्म और महर्षि दयानन्द का प्रभाव बढ़ता चला गया। १९०८ में पानीपत आर्यसमाज के उत्सव में स्वामी ब्रह्मानन्द जी से आपने यज्ञोपवीत धारण कर लिया।

आर्यसमाज की दीक्षा मात्र एक औपचारिकता न थी। पटवारी जी ने धीरे धीरे अपनी न्यूनताओं, कमजोरियों का परित्याग किया। मांसभक्षण आदि दोषों को त्याग दिया। आर्यसमाज के प्रचार और समाजसेवा की आपको ऐसी लगन लगी कि अपना अधिकांश समय परोपकार के कार्यों में लगाने लगे। सरकारी सेवा से अतिरिक्त समय में व्याख्यान व भजनों द्वारा प्रचार करने लगे। अपना तबादला भी आर्यों के गांव बुवाना लाखु में करा लिया। आपके सादगीपूर्ण व्यक्तित्त्व और श्रेष्ठ आचरण का लोगों पर विशेष प्रभाव पड़ता था। आप स्वयं इस बात के लिए सजग रहते थे कि किसी प्रकार का दुर्गुण-दोष आपके अन्दर न आने पाए। आपको अपने अज्ञान काल में पटवारी के रूप में ली गई रिश्वत का बड़ा पश्चात्ताप रहता था। आपने अपना नाम भी फूलसिंह प्रायश्चित्ती रख लिया था। साधारण या महान् व्यक्ति भविष्य में बुरे कर्म न करने की प्रतिज्ञा करता है, लेकिन विश्व के इतिहास में ऐसे उदाहरण बहुत कम मिलेंगे कि जिसमें किसी व्यक्ति ने पूर्व में किए गए गलत कार्य का इस प्रकार प्रायश्चित किया हो। भक्त फूलसिंह ने निश्चय किया कि मैं अपने जीवन काल में ली गई रिश्वत लौटा दूंगा। आपने अपनी समस्त पैतृक भूमि बेच दी और घर-घर जाकर रिश्वत को लौटाया। इसमें एक-एक दो-दो रुपये की रिश्वत भी शामिल थी। रिश्वत वापस लेने वालों के लिए यह किसी चमत्कार से कम न था और वे रिश्वत लौटाने वाले फूलसिंह को किसी देवता से कम न समझते थे।

इससे पूर्व १९१८ में आप आर्यसमाज के कार्यों में रम जाने के कारण पटवारी के पद से त्यागपत्र दे चुके थे। आपने अपने वैदिक सिद्धान्त के ज्ञान को दृढ़ करने के लिए स्वामी सर्वदानन्द जी का मार्गदर्शन प्राप्त करने का निश्चय किया था किन्तु अन्य सामाजिक कार्यों में व्यस्तता के कारण आप नियमपूर्वक स्वामीजी से अध्ययन न कर सके। १९१९ में स्वामी ब्रह्मनन्द जी के परामर्श से भैंसवाल गुरुकुल की स्थापना की। इस गुरुकुल की आधारशिला महर्षि दयानन्द की शिक्षा पद्धति के पुनर्प्रतिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक युगपुरुष स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने रखी थी। स्वामी जी अपार जनसमूह के साथ सोनीपत से बारह कोस पैदल

चलकर भैंसवाल पहुंचे थे। गुरुकुल की स्थापना के समय स्वामीजी ने जो प्रेरणादायी शब्द कहे थे वे आज भी हरियाणा के लोगों के लिए प्रेरणादायी हैं- 'हरियाणा की भूमि आर्य-भूमि कहलाने की अधिकारिणी है। यहाँ के मनुष्य मांस-मदिरा आदि दुर्गुणों से सर्वथा दूर हैं। यहाँ का भोजन दूध, दही और घी पर आश्रित है। मैंने जो उत्साह यहाँ की आर्य जनता में देखा है वैसा उत्साह दूसरे स्थानों पर देखने में कम मिलता है। मैं आशा करता हूँ कि यह भूमि हरियाणा के आर्यों का नेतृत्त्व करेगी।'

**स्वतंत्रता सेनानी के रूप में**

हैदराबाद सत्याग्रह भारत के स्वतंत्रता संग्राम का अप्रतिम अध्याय है। जनता के मौलिक अधिकारों के हनन के विरुद्ध आर्यसमाज ने प्रचण्ड जनान्दोलन खड़ा किया, जिसने न केवल निजाम को घुटने टेकने पर मजबूर किया, बल्कि उसके भारत संघ में विलय की पृष्ठभूमि भी तैयार की। इस आन्दोलन में हरियाणा के आर्यों का सर्वाधिक योगदान रहा। इसका श्रेय निश्चय ही महात्मा भक्त फूलसिंह के प्रभाव और कार्यकुशलता को जाता है। सत्याग्रह की समाप्ति पर महाशय कृष्ण जी ने कहा था- 'जब भक्त फूलसिंह जैसे फरिश्ते आर्यसमाज में विद्यमान हैं, तब हमें जेल में कौन बन्द रख सकता है?'

इसी प्रकार लोहारू रियासत में भी आर्यसमाज द्वारा किए गए आन्दोलन में भक्त फूलसिंह जी ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान किया। आर्यसमाज के शान्तिपूर्ण जलूस पर जब योजनाबद्ध ढंग से राजकीय संरक्षण प्राप्त गुण्डों द्वारा आक्रमण किया गया तो स्वामी स्वतंत्रानन्द जी व अन्य नेताओं के साथ साथ महात्माजी को भी गहरी चोटें आईं। उन्होंने लोहारू संघर्षकारियों की तन मन धन से सहायता की।

**दलितोद्धारक :**

दलितोद्धार प्रारम्भिक काल में आर्यसमाज के प्रमुख कार्यक्रमों में सम्मिलित था। आर्यसमाज के प्रमुख नेताओं स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय और स्वयं स्वामी दयानन्द ने भी इस क्षेत्र में ठोस कार्य किया। भक्त फूलसिंह के जीवन में भी इस प्रकार के अनेक प्रसंग आए जब उन्होंनें दलितों का हक दिलाने के लिए सफल संघर्ष किए। हिसार का गांव मोठ मुसलमान रांघड़ों का प्रसिद्ध गांव था। यहाँ सरेआम गौवों की हत्या की जाती थी और वहाँ के असहाय आर्य ग्रामीण देखते रह जाते थे। दलित मुस्लिम गठजोड़ के युग में यह बात विचारणीय है कि मोठ गांव में रांघड़ों ने दलित चर्मकार बंधुओं को उनकी भूमि पर पानी के लिए कुंआ तक नहीं बनाने दिया था। मोठ के हरिजन भाईयों ने तात्कालीन राष्ट्रीय नेताओं से प्रार्थना की, अनेक प्रयास सन् १९२८ में ललितखेड़ा ग्राम में पधारे तो देखा कि गांव में गौवों के घूमने फिरने के लिए कोई शामलात भूमि नहीं है और दिन में भी गौवें घरों के अन्दर बंधी हुई हैं। आप ने गांव वालों को गौवों के लिए शामलात गौचरान भूमि छोड़ने की प्रेरणा दी। गांव वासियों पर इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं हुआ। अन्ततः आपने इस कार्य के लिए अनशन प्रारम्भ कर दिया। १९ दिन के अनशन के बाद ग्रामवासियों के हृदय पसीजे और सामूहिक भूमि छोड़ने की बात को स्वीकार कर लिया।

किए लेकिन उनको सफलता नहीं मिली। अन्त में वे भक्त फूलसिंह जी के पास पहुंचे। उस समय भक्त जी हैदराबाद आन्दोलन में व्यस्त थे। आपने उन भाईयों की समस्या के समाधान का वचन दिया और १ सितम्बर १९४० को मोठ पहुंच गए। तीन दिन तक ग्रामीणों को समझाने का प्रयत्न करते रहे किन्तु रांघड़ों ने अपनी हठधर्मिता न छोड़ी। अन्त में विवश होकर महात्मा जी ने कहा- 'कुंआ बनने पर ही मैं अन्न जल ग्रहण करूँगा। अन्यथा यहीं पर प्राण त्याग दूंगा।' इस पर भी वे लोग नहीं पसीजे। तीन चार दिन बाद महात्मा जी पर प्राणघातक हमला किया गया और उन्हें उठाकर जंगल में डाल आए। अन्ततः २३ दिन के अनशन के बाद महात्माजी को अपने कार्य में सफलता मिली और पंजाब में हरिजनों के लिए पानी की समस्या हल हुई। इस सफलता के बाद गांधीजी ने भी आप से भेंट की और इस सफलता के लिए बधाई दी। इसी दौरान आपने चौ० छोटूराम जी को भी एक पत्र लिखा था- 'आप सूबे पंजाब के कागजात माल में जो नम्बर खसरा आबादी देह की मिलकियत का है, उसमें कुल हरिजनों के बगैर किसी रोक टोक के कुंआ बनवाने की इजाजत दिलवावें।'

**शुद्धि आन्दोलन :**

आर्यसमाज का शुद्धि आन्दोलन उन भाईयों के लिए था जो पराधीनता काल में किसी कारण से अपने पूर्वजों के धर्म को छोड़ चुके थे और पुनः अपने पूर्वजों के धर्म को अंगीकार करना चाहते थे। इसमें रूढ़िवादी हिन्दुओं और विधर्मियों के द्वारा अनेक प्रकार की बाधाएँ उपस्थित की जाती थीं। हरियाणा में मूले जाट इसी प्रकार का वर्ग था जो औरंगजेब के शासनकाल में प्राणभय से मुसलमान बन गया था। आर्यसमाज के प्रभाव से वे अपने पूर्वजों के वैदिक धर्म में लौटना चाहते थे। पलवल और होडल के मूले जाटों की इस इच्छा को देखकर भक्तजी वहाँ पहुच गए। शुद्धि के

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

# देवों का सोमपान

**लेखक- स्वामी भूमानन्द जी सरस्वती**
पूर्व आचार्य गुरुकुल होशंगाबाद

क्या चेतन शब्द के विशेषण देने पर भी कोई संशय का स्थान रहता है। परन्तु जिन्होंने भगवती श्रुति को गडरियों के गीत सिद्ध करने के लिए कलुषित संकल्प कर लिया है तथा जो भारतीय दिवान्ध अन्धेनैव नीयमाना यथान्धा के पात्र हैं उनकी समझ में यह सुसंगत विचार माला कैसे उतरे।

प्राचीन शास्त्रों में सोम की महिमा का पदे-पदे वर्णन मिलता है और धार्मिक जनों का विश्वास है कि पुराकाल में देव सोम का पान करके अमर हो जाते थे। मध्य काल में जबकि वेद का यथार्थ ज्ञान अग्नि में भस्मसात् हो गया था तो उसके भाव का स्वरूप पूर्णरूपेण बदल सा गया था। इस बात को आप इस दृष्टान्त से भली-भाँति समझ जायेंगे कि श्री भगवान् कृष्ण ने गोवर्धन का बीड़ा उठाया था, जो बाद में बदल कर यह कल्पित हो गया कि श्रीकृष्ण ने पर्वत को उठाया था। फिर कुछ काल पश्चात् लोक में गोवर्धन का गोबरधन बन गया परन्तु आज उस गोबरधन का भी गोर्धन बन गया है। ठीक इसी भाँति हमारी अन्य सारमयी गाथाओं की गति खिचड़ी से खाचड़ी बन गई। उसका मूल कारण केवल यही है कि हमने अपने आर्य साहित्य का परित्याग करके शब्दाडम्बर के ही उत्सव मनाये।

गुरु विरजानन्द एवं महर्षि दयानन्द की दया से आज कुछ आर्ष ग्रंथों पर अनुलोम चिन्तन हो रहा है जिसके कारण आज उन निःसार एवं कपोल कल्पित कही जाने वाली गाथाओं में तत्त्व प्रतीत होने लगा है। इसी प्रकार सोमपान की भी एक कथा है। हम उसके ऊपर कुछ विचार करते हैं। हो सकता है कि मेरे विचार में कुछ कमी हो परन्तु यह नितान्त कोरी कल्पना नहीं हो सकती। इसके विचार करने में मुझे पूज्य गुरुदेव स्वामी समर्पणानन्द जी से मार्ग मिला है जो स्वयं ऐसे अनेक तत्त्वों के उद्घाटक थे।

वेदों में सोमपान का बहुत बार वर्णन है। ऋग्वेद में अनेक स्थलों पर सोमपीतये शब्द आता है। सामवेद में तो एक काण्ड ही पूरा का पूरा सोम की महिमा से भरा पड़ा है। अतः सोमपान की कथा वैदिक साहित्य में अपना विशेष स्थान रखती है। इसको समझने के लिए हमको पहले सोम शब्द के धात्वर्थ पर विचार कर लेना चाहिए। सोम शब्द आचार्य पाणिनि के अनुसार ''षुञ् अभिषवे'' धातु से मन् प्रत्यय करके सिद्ध होता है। अभिषव का सीधा अर्थ तो निचोड़ना होता है परन्तु आचार्य सायण अपनी धातु वृत्ति में अभिषव का अर्थ यों लिखते हैं-

अभिषवः-स्वप्नपीडास्नानसुरासन्धानादिः।।

इस प्रकार अभिषव के अर्थ इस प्रकार होते हैं- स्नान कराना, कूटना, स्नान करना और जिस तरह से शराब को निकाला जाता है, वैसे सार निकालना।

इन अर्थों वाली षुञ् धातु से और औणादिक मन् प्रत्यय करने से सोम शब्द निष्पन्न होता है। वैसे तो औणादिक प्रत्यय कृत् ही होते हैं। इसलिए 'कर्तरि कृत' इस सूत्र के नियम से कर्त्ता में होते हैं, परन्तु आचार्य पाणिनि ने औणादिक प्रत्ययों के विषय में और भी नियम बनाये हैं। वे हैं- ताभ्यामन्यत्रोणदयः।। इसका अर्थ है कि जो औणादिक कृत होने से कर्ता ही में प्राप्त हैं वे दाशगोघ्नौ सम्प्रदाने तथा भीमादयोऽपादाने इन अपादान एवं सम्प्रदान कारकों को छोड़कर शेष कारको में भी होते हैं। इस प्रकार औणादिक प्रत्यय कर्ता, कर्म, करण तथा अधिकरण कारकों में होते हैं। अतः सोम शब्द भी ४ साधनों में सिद्ध होता है। यथा- सुनोति यःस सोमः, सुन्वन्ति यं वा स सोमः, अथवा सुन्वन्ति अनेन स सोमः तथा सुन्वन्ति यस्मिन् स सोमः।। अर्थात् जो निचोड़ता है, जिसको निचोड़ते हैं, जिससे निचोड़ते हैं और जिसमें निचोड़ते हैं, वह सोम कहलाता है। पूज्य महर्षि दयानन्द ने अपनी उणादिवृत्ति में केवल अधिकतर निरुक्तियाँ कर्त्ता में दी हैं। क्योंकि सभी व्युत्पत्ति वे दिखाते तो ग्रन्थ बहुत बड़ा बन जाता। अतः उन्होंने औणादिक प्रत्यय किन-किन कारकों में होते हैं इनकी विवेचना भूमिका में ही कर दी। इस प्रकार सोम के धातु तथा प्रत्यय के समझ लेने से हमारी बहुत सी समस्याएं हल हो जायेंगी। यथा सोम औषधि को कहते हैं क्योंकि उसका रस निकालने के लिए निचोड़ा जाता है। कर्म साधन होने से युक्त है। सोम चन्द्रमा को कहते हैं क्योंकि वह

ही सब वनस्पतियों में रस को निचोड़ता है। वह प्रभु सबसे बड़ा सोम है क्योंकि वह सब रसों का रस है। इस प्रकार यह तत्त्व सुसिद्ध है कि संसार का वह पदार्थ सोम है जो इन क्रियाओं का हेतु, निमित्त व कारण है।

परन्तु देवों का सोम पान क्या है? जिसको पी कर वे अमर हो जाते हैं। लौकिक साहित्य के अनुसार सोम एक दिव्य लता है जिसको पुराकाल में देव लोग यज्ञ में पीते थे और अमर हो जाते थे। इस प्रकार की औषधि कहीं आजकल उपलब्ध नहीं होती, अतः जिस सोम की इतनी महिमा वेद में गाई है वह केवल एक औषधि मात्र नहीं, हाँ कहीं प्रकरणानुसार उसका अर्थ औषधि (वनस्पति) आदि भी हो सकता है। परन्तु जिस सोम का सम्बन्ध देवों के पान के साथ है वह कुछ और ही है, इसलिए वेद कहता है– 'सोमं मन्यते पपिवान् यत्सम्पिषन्त्यौषधिम्' अर्थात् जिस औषधि को तू सोम समझ कर कूट रहा है वह वास्तविक सोम नहीं। फिर वह वास्तविक सोम क्या है? इसका निर्णय शतपथ के इस वचन से नितरां हो जाता है– 'दीक्षातपसोर्ह कुरयोः अन्तर्निहितः सोम आस'। यह वाक्य सब संशयों को सूर्य प्रकाशवत् विद्रावित कर देता है। क्योंकि चन्द्रमा वा औषधि अथवा और कोई दूसरा क्या हो सकता है; जो दीक्षा और तप के आधारभूत गुरुकुल में वास करके अनेक विद्याओं को निचोड़ता है अथवा आचार्य लोग उसको अनुशासन रूपी कठोर पीड़ा प्रदान करके उनके सब दुरितों को निचोड़कर निर्मल कर देते हैं या उसी में अपनी सब विद्याओं के सार भूत रस को निचोड़ देते हैं। इन सब रसों के पान किए हुए ब्रह्मचारी के गुण गौरव को वेद यों गाता है–

**स स्नातो बभ्रुः पिङ्गलः पृथिव्यां बहु रोचते।** जिसने वेदाब्धि में गोता लगा लिया है। अपने शारीरिक एवं बौद्धिक विकास को पूर्ण कर लिया है वह कान्ति से देदीप्यमान ब्रह्मचारी संसार में अनुपम उच्च शोभा को पाता है।

अब लीजिए निरुक्तकार आचार्य यास्क को। वे भी सोम शब्द को सुञ् धातु से व्युत्पन्न मानते हैं। यथा– सोमः सवनात्। इस प्रकार सोम के धातु के बारे में वैयाकरण निकाय एवं निरुक्तकार एकमत हैं। अब देखिये आचार्य यास्क सोम शब्द का अर्थ क्या करते हैं।

१ सोमः सूर्यः प्रसवनात्।
२ सोमः आत्मा एतस्मादेव।
३ अपि वा सर्वाभिर्विभूतिभिर्विभूततम आत्मा।।
४ सोमः चन्द्रमा, सोम ओषधिः।।

अब देखिये निरुक्तकार का यह अर्थ– 'अपि वा सर्वाभिर्विभूतिभिर्विभूततम आत्मा' अर्थात् जो सब विद्या, ब्रह्मचर्यादि विभूतियों से सुभूषित है वह सोम है। मेरे किये हुए अर्थ के साथ तथा याज्ञवल्क्य के इस वाक्य 'सोम दीक्षा और तप के गमले में तैयार होता है' के साथ कितना सुसंगठत बैठता है।

अब तक मैंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि सोम केवल किसी औषधिविशेष का ही नाम नहीं अपितु सोम के अर्थ प्रकरणानुसार औषधि, सूर्य, चन्द्रमा आदि बहुत से हैं। परन्तु देव जिस सोम का पान करते हैं वह औषधि सूर्य, चन्द्रमा नहीं अपितु गुरुकुल में विधिवत् गृहीत विद्या तथा पूर्णव्रत स्नातक का है। इसकी पुष्टि मैं शतपथ एवं निरुक्तकार के वचनों द्वारा कर चुका हूँ।

अब लीजिए वेद को। सामवेद का पांचवाँ अध्याय पूरा का पूरा सोम की महिमा से परिपूर्ण है। इस अध्याय का नाम पवमान पर्व भी है। अतः इस पर्व के विषय में कुछ लिखूँ इससे पूर्व एक बात कह देना चाहता हूँ कि वेद में अनेक रहस्यों को एक ही शब्द द्वारा प्रकट किया है। उस शब्द का मुख्य अर्थ तो एक ही है, परन्तु तदनुकूल स्थितियों में वह अर्थ सब जगह घट जायेगा, जैसे मैं एक वैदिक शब्द रुद्र को लेता हूँ। इसका वास्तविक अर्थ है– दुष्टों को रुलाने वाला। परन्तु जब मन्त्र का अर्थ हम परमात्मा परक करेंगे तो रुद्र शब्द का अर्थ दुष्टों को रुलाने वाला प्रभु होगा तथा जब सेना परक करेंगे तो वहाँ रुद्र का अर्थ सेनापति होगा। इसी प्रकार सोम का वास्तविक अर्थ तो अभिषवन क्रिया के हेतु का है परन्तु क्योंकि परम पिता प्रभु सबसे बड़ा अभिषवन क्रिया का हेतु है अतः वह परम सोम है। अन्य भी जितने पदार्थ संसार में अभिषवन क्रिया के कारण हैं वे सब भी सोम हैं तथा उन सबका वर्णन एक सोम के वर्णन से ही किया जाता है। यही वेद का 'अनन्ता वै वेदाः' का रहस्य है क्योंकि वेद में एक ही बात से सैकड़ों विषयों का ज्ञान हो जाता है। इस शैली का निर्देश महर्षि दयानन्द ने भी दिया है। अब मैं सामवेद के सोम पर्व के मंत्र उपस्थित करता हूँ जिनसे सुतरां यह संगति चन्द्रतारकवत् प्रतिमण्डित प्रतीत होगी कि सोम एक लता का ही नाम नहीं अपितु वह एक जीते जागते देपीप्यमान स्नातक का भी नाम है। यथा पञ्चम अध्याय का पञ्चम मंत्र लीजिए–

तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः। हरिरेति कनिक्रदत्।

अर्थात् जिस तरह दुधारु गौ दूध दोहने के लिए स्वमेव स्वभावतः रम्भाने लगती है। ठीक इसी प्रकार सब विद्याओं का अभिषव जिसने किया हुआ है वह सोम स्वभाव से ही अपनी देदीप्यमान वाणी से ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद की वाणी का उपदेश उद्घोषणा के साथ करता है। यहाँ उदीरते शब्द सिद्ध करता है कि यह मन्त्र किसी विद्वान्

(शेष पृष्ठ ३० पर)

# आत्मा से परमात्मा तक

❑महात्मा ओममुनि वानप्रस्थ,
शेखपुरा (हांसी) जिला हिसार १२५०३३

इस वाचक प्रणव अर्थात् अ, उ व म् (ओ३म्) प्रणव के मानसिक जप की परिपक्व अवस्था के पश्चात् योगी केवल ध्यानरूप ध्वन्यात्मक प्रणव की भूमि में पहुँच जाता है। उस पर पूर्ण अधिकार की प्राप्ति असम्प्रज्ञात समाधि के प्राप्त करने में सहायक होती है। अतः योग मार्ग पर चलने वालों को उचित है कि वे 'ओ३म्' नाम से ही ईश्वर की उपासना करें।

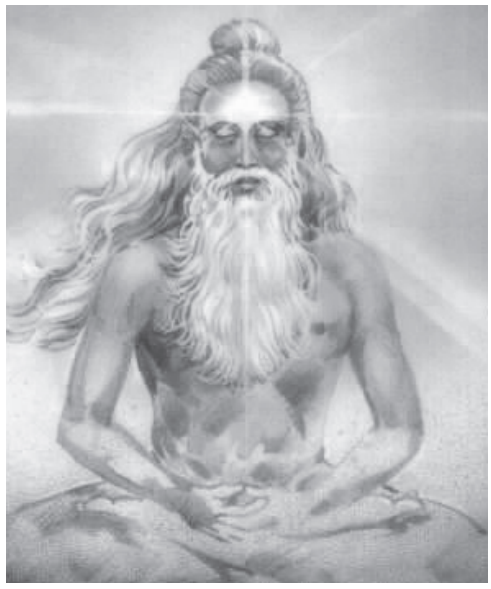

योगदर्शन के समाधि पाद के २३वें सूत्र में महर्षि पंतजलि लिखते हैं- ईश्वर प्रणिधानाद्वा।। अर्थात् मन, वचन व कर्म से सभी क्रियाओं व उनके फलों को पूर्ण रूप से ईश्वर को समर्पण करना ईश्वर प्रणिधान कहलाता है।

महर्षि वेदव्यास जी महाराज का कथन है-

स्वाध्यायाद् योगामासीत योगात् स्वाध्यायमामनेत्।
स्वाध्याययोगसम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते।।

अर्थात् स्वाध्याय नाम प्रवण जप और अध्यात्म शास्त्र के विचार का है। प्रणव जप के पश्चात् योगाभ्यास करें और योगाभ्यास के पश्चात् प्रणव का जप करें। स्वाध्याय और योग इन दोनों से परमात्मा प्रकाशित होते हैं।

इस प्रकार ईश्वर प्रणिधान से शीघ्र समाधि लाभ प्राप्त होता है। किन्तु जिस ईश्वर के प्राणिधान से शीघ्र समाधि लाभ प्राप्त होता है, उसका स्वरूप क्या है? तब ऋषि लिखते हैं-

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वर।।३४।।

अर्थात् जो क्लेश, कर्म, उनके फल और वासनाओं से सम्बन्ध रहित है, वह अन्य पुरुषों से विशेष, भिन्न, उत्कृष्ट चेतन ईश्वर है। अब इस सूत्र के शब्दों पर विचार करते हैं।

**क्लेश-** जो दुःख देते हैं वे क्लेश कहलाते हैं। ये अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष व अभिनिवेश- पाँच प्रकार के होते हैं।

**कर्म-** इन पाँच क्लेशों से धर्म-अधर्म, शुभ-अशुभ और इनसे मिश्रित तीन प्रकार के कर्म उत्पन्न होते हैं।

**धर्म-अधर्म=**वेद में विधान किये हुए सब प्राणियों के कल्याण की भावना से किए गए कर्म- धर्म कहलाते हैं और वेद में निषेध किये गए हिंसात्मक कर्म अधर्म की श्रेणी में आते हैं।

**विपाक**- जो सकाम कर्म परिपक्व हो जाते हैं अर्थात् उनके फल सुख-दुःख रूप, जाति, आयु और भोग के रूप में प्राप्त होते है वे विपाक कहलाते हैं।

**आशयः-** जिन कर्मों के फल पकने तक चित्तभूमि में सोई अवस्था में होते हैं उन्हें आशय कहते हैं अर्थात् जो कर्म अभी पककर जाति, आयु और भोग के रूप में फल नहीं दे पाये, वे कर्म आशय कहलाते हैं।

उपर्युक्त क्लेश, कर्म, विपाक, आशय इन चारों से तीन कालों में जिसका लेशमात्र भी सम्बन्ध न हो, वही अन्य पुरुषों से विशिष्ट चेतन सत्ता, ईश्वर कहलाता है। जिसमें ज्ञान और ऐश्वर्य की पराकाष्ठा हो और क्लेश, कर्म आदि से सदा रहित हो, वह सदामुक्त, नित्य, निरतिशय, अनादि, अनन्त, सर्वज्ञ पुरुषविशेष ईश्वर है। कुछ लोग सृष्टि के प्रारम्भ में हुए ब्रह्म, विष्णु व शिव आदि तथा बाद में उत्पन्न हुए राम-कृष्णादि को ईश्वर मानते हैं। इस शंका का निवारण अगले सूत्र में है कि-

**पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।।**

अर्थात् वह ईश्वर पूर्व उत्पन्न ब्रह्मादि का भी उपदेष्टा है, गुरु है। क्योंकि वह काल से अविच्छिन्न (परिमित) नहीं है। इसलिए ब्रह्मादि को ज्ञान प्रदान करने से ईश्वर उन सबका गुरु और उपदेष्टा है। योग-दर्शन के इस सूत्र में गुरुओं के गुरु की भावना से ईश्वर की उपासना बताई है।

अब प्रश्न यह उठता है कि सब गुरुओं के गुरु परमगुरु परमात्मा का प्रणिधान उसकी उपासना किस प्रकार और नाम से होती है? तब महर्षि पंतजलि

इसका समाधान इस प्रकार करते हैं-

**तस्य वाचक प्रणव।।२७।**

अर्थात् उस ईश्वर का बोधक शब्द जो वाणी से उच्चारण या मन से जप करने वाला नाम 'ओ३म्' है। यह ईश्वर और ओ३म् का वाच्य-वाचक भाव सम्बन्ध नित्य है। वर्णों के संकेत से तो केवल प्रकाशित होता है, नया उत्पन्न नहीं होता है।

अतः योग मार्ग पर चलने वालों को उचित है कि 'ओ३म्' नाम से ही ईश्वर की उपासना करें, क्योंकि यही उसका मुख्य, अनादि और नित्य नाम व्यापक अर्थवाला है। अन्य सब नाम संकुचित व संकीर्ण अर्थ वाले हैं। सारी श्रुतियाँ उसी 'ओ३म्' नाम की महिमा का मुख्य रूप से वर्णन कर रही हैं।

जब उपासक ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद को पढ़ता हुआ ऊँचे स्वर में 'ओ३म् ' बोलता है, यही ओ३म् शब्द स्वर है, यही अक्षर है; यही अमृत है और यही अभय है। जो उपासक ऐसा जानकर ओ३म् की स्तुति करता है, वह उस स्वर् में प्रवेश करता है जो अक्षर, अमृत और अभय है। वह बार-२ ओ३म् नाम का जप जिस भाव से करता है उसे-

'तज्जपस्तदर्थ भावनम्।।२८।।

अर्थात् उस प्रणव-ओ३म् का जप और उसके अर्थभूत ईश्वर का ध्यान करना, चिन्तन करना ईश्वर प्रणिधान है। ओ३म् का जप उसके अर्थों की भावना के साथ होना चाहिए। इस प्रकार ईश्वर-प्रणिधान से शीघ्र समाधि लाभ प्राप्त होता है।

कहीं-२ शास्त्रों में ऐसा वर्णन भी आया है कि प्रणव ध्वनि केवल ध्यान द्वारा अनुभव करने योग्य है। यथार्थ में उसका मुख से उच्चारण होना या करना असंभव है। साधारणतया जो प्रणव-मंत्र 'ओ३म्' उच्चारण किया जाता है, वह त्रयक्षरमय अर्थात् अ, उ, म् ओंकार रूपी प्रणव होता है। जिसके तीनों अक्षरों में त्रिगुणमयी प्रकृति क्रमशः अपने तीनों गुणों सत्त्व, रजस् और तमस् अथवा कारण, सूक्ष्म और स्थूल तीनों जगत् सहित तथा सर्वशक्तिमान् परमेश्वर उनके अधिष्ठाता विराट्, हिरण्यगर्भ और ईश्वर रूप से अथवा सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय की अपेक्षा से ब्रह्मा, विष्णु और महेश रूप से विद्यमान है। प्रवण ही ईश्वर रूप है।

वैज्ञानिक दृष्टि से प्रणव का स्वरूप यह है कि जहाँ कोई कार्य या क्रिया होती है वहाँ कम्पन भी अवश्य होगा और जहाँ कम्पन होगा वहाँ शब्द भी अवश्य उत्पन्न होगा। सृष्टि की आदि कारण रूप कार्य की ध्वनि ही ओंकार है, प्रणव ध्वनि ही ओंकार है। प्रणव ध्वन्यात्मक होने से उसका कोई भी अंग वाणी से उच्चारण करने योग्य नहीं है किन्तु मानसिक जप से परे केवल ध्यान की अवस्था में अन्तःकरण में ही प्रणव ध्वनि सुनाई दे सकती है।

इस वाचक प्रणव अर्थात् अ, उ व म् (ओ३म्) प्रणव के मानसिक जप की परिपक्व अवस्था के पश्चात् योगी केवल ध्यानरूप ध्वन्यात्मक प्रणव की भूमि में पहुँच जाता है। उस पर पूर्ण अधिकार की प्राप्ति असम्प्रज्ञात समाधि के प्राप्त करने में सहायक होती है। अतः योग मार्ग पर चलने वालों को उचित है कि वे 'ओ३म्' नाम से ही ईश्वर की उपासना करें। परमपिता परमात्मा अपने भक्त उपासकों के कल्याणार्थ पवित्र वेद में अपने स्वरूप का वर्णन इस प्रकार करते हैं-

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरम् शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषीः परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यवदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।। यजुर्वेद ४०/८।।

प्रभु अपने स्वरूप का वर्णन करते हुए कहते हैं कि- मैं तो सब जगह व्यापक हूँ। मैं शुद्धस्वरूप व कायारहित हूँ। शरीर रहित होने से मुझमें कोई व्रण/घाव आदि भी नहीं हो सकते। मैं मानव की तरह पाप के कीचड़ में नहीं फंसता। अच्छे-बुरे कर्मों का मुझ से कोई सम्बन्ध नहीं हैं। मैं क्रांतदर्शी व सर्वज्ञ हूँ। सर्वव्यापक, सब जगह मौजूद, कभी उत्पन्न न होने वाला, सदा से अपने आप में वर्तमान और अनादिकाल से निरंतर वर्ष-वर्षान्तर से यथावत् प्रकार से, भली-भाँति, ठीक-ठीक सृष्टि के सब व्यवहारों व सृष्टि का सारा प्रबंध स्वयं करता हूँ।

परम दयालु प्रभु अपने प्रिय जीवों के कल्याणार्थ यजुर्वेद के ४०वें अध्याय के अन्तिम मन्त्र में अपना निज नाम इस प्रकार प्रकट करते हैं-

हिरण्यमेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्। ओ३म् खं ब्रह्म।।

हे मनुष्यो! मैं जो यहाँ हूँ वही अन्यत्र सूर्यादि लोकों में भी हूँ और जो मै वहाँ हूँ यहाँ भी हूँ। मैं सर्वत्र परिपूर्ण आकाश तुल्य व्यापक मुझ से भिन्न कोई अन्य बड़ा नहीं है। मैं ही सबसे बड़ा हूँ। मेरे सुलक्षणों से युक्त पुत्र के समान प्राणों से प्यारा मेरा निज नाम 'ओ३म्' है। जो प्रेम और सत्याचरण से मेरी शरण लेता है। मैं अन्तर्यामी रूप से उसकी अविद्या का नाश करके, उसकी आत्मा में प्रकाश करते हुए शुभ गुण-कर्म-स्वभाव वाला बनाकर और सत्यस्वरूप का आवरण स्थिर कर योग से युक्त विज्ञान प्रदान करता हूँ और सब दुःखों से अलग करके उसे परमानन्द की प्राप्ति कराता हूँ।

# बाल झड़ना गिरना टूटना : बरगद का चमत्कार

**प्रस्तुति : संजयकुमार**

आजकल सिर के बाल गिरने, बाल उड़ने के व बालों में डेंड्रफ की बहुत समस्याएँ सामने आ रही हैं। इसका सबसे बड़ा कारण है सोडियम लुराइल सल्फेट। यह वह कैमिकल है जो सभी किस्म के शैंपू में प्रयोग होता है चाहे वह किसी भी कंपनी का है। 90 प्रतिशत नहाने के साबुनों मे भी यही कैमिकल प्रयोग होता है। जब तक आप ऐसे साबुन या शैंपू का प्रयोग करेंगे तब तक कोई भी तेल कोई लाभ नहीं करेगा। बाल धोने के लिए खट्टी लस्सी, दही या नींबू का प्रयोग करें या वह साबुन प्रयोग करें जिसे तेल व कास्टिक सोडे से परंपरागत विधि से बनाया गया हो।

**बाल मे तेल लगाने की विधि-**

बाएँ हाथ की हथेली में तेल लें। दाएँ हाथ की चारों अँगुलियों को इस तेल मे डुबोकर धीरे धीरे बालों की जड़ मे लगाएँ। दोनों हथेलियों पर तेल लगाकर सिर में लगाने की विधि गलत है।

गीले बालों मे तेल न लगाएँ। सर्दी में नारियल का तेल जम जाता है इसलिए सर्दी में नारियल के तेल का प्रयोग न करें।

**❍बरगद/वट/बड़ का प्रयोग :-**

पीतल, लौहे या एल्युमीनियम की कड़ाही लें। उसमें 250 ग्राम सरसों का या तिल का तेल लें। साथ में बरगद के साफ हरे 30-40 पत्ते लें। पत्तों को गीले कपड़े से पोंछ कर साफ कर लें। ध्यान रहे पत्तों पर पानी की बूँदे न रहें। तेल को धीमी आग पर गरम करें। जब तेल गरम हो जाए तो उसमें चिमटे से पकड़ कर एक-एक करके पत्ते डाल दें। जब सभी पत्ते सूख जाएँ तब आग बंद कर दें। ध्यान रहे पत्ते जल कर काले नहीं होने चाहिएँ अन्यथा तेल खराब हो जाएगा। जब तेल ठंडा हो जाए तब छान कर तेल को निकाल लें।

यह तेल प्रतिदिन बालों मे लगाना चाहिए। बाजार में मिलने वाले नवरत्न आदि तेल न तो इसके बराबर ठंडे हैं और न ही इसके बराबर गुणकारी। यह गर्मी में सिर मे ठंडक लाता है और सर्दी मे गर्मी। बालों का झड़ना/ गिरना बहुत जल्दी रोकता है। जिसने यह प्रयोग लिखा है उसने इसे बाल

बाल धोने के लिए खट्टी लस्सी, दही या नींबू का प्रयोग करें या वह साबुन प्रयोग करें जिसे तेल व कास्टिक सोडे से परंपरागत विधि से बनाया गया हो।

उगाने वाला व बाल लंबे करने वाला लिखा है परंतु मेरा अनुभव केवल बाल गिरने पर ही है।

❍बरगद की जटा-

बरगद के पेड़ पर धागे जैसे लटके होते हैं जिन्हें बरगद की जटा या दाढ़ी कहते हैं। लगभग 500 ग्राम नर्म जटा लें। जटा इतनी नर्म हो कि आसानी से टूट जाए। लाकर पीस लें/ कूट लें। 2 किलो पानी में इतना पकाएँ कि पानी एक किलो रह जाए। इस पानी को छान कर रख लें। इसे कड़ाही मे 250 ग्राम तिल के तेल के साथ पकाएँ। जब सारा पानी जल जाए और केवल तेल रह जाए तब तेल को निकाल कर रख लें।

बालों को गिरने से रोकने में बहुत प्रभावशाली है। जिनका सिर घूमता हो, चक्कर आते हों, सिर मे दर्द रहता हो वह इस तेल का प्रयोग करके इसका चमत्कार देखें।

# तुलसी की उपयोगिता

❍तुलसी भोजन को शुद्ध करती है, इसी कारण ग्रहण लगने के पहले इसे भोजन में डाल देते हैं जिससे सूर्य या चंद्र की विकृत किरणों का प्रभाव भोजन पर नहीं पड़ता।

❍तुलसी खून की कमी के लिए रामबाण दवा है। नियमित सेवन से हीमोग्लोबीन तेजी से बढ़ता है और स्फूर्ति बनी रहती है।

❍तुलसी के सेवन से टूटी हड्डियाँ शीघ्रता से जुड़ जाती हैं।

❍तुलसी का पौधा दिन रात आक्सीजन देता है, प्रदूषण दूर करता है।

❍खाना बनाते समय सब्जी, पुलाव आदि में तुलसी के रस का छींटा देने से पौष्टिकता व महक दस गुना बढ़ जाती है।

**उपयोग में सावधानी :-**

❍तुलसी की प्रकृति गर्म है, इसलिए गर्मी निकालने के लिये इसे दही या छाछ के साथ लें, इसके ऊष्ण गुण हल्के हो जाते हैं।

❍तुलसी अंधेरे में न तोड़ें, शरीर में विकार आ सकते हैं। क्योंकि अंधेरे में इसकी विद्युत लहरें प्रखर हो जाती हैं।

❍तुलसी के सेवन के बाद दूध भूलकर भी ना पियें, चर्म रोग हो सकता है।

❍तुलसी रस को अगर गर्म करना हो तो शहद साथ में न लें। गर्म वस्तु के साथ शहद विष तुल्य हो जाता है।

❍तुलसी के साथ दूध, मूली, नमक, प्याज, लहसुन, मांसाहार, खट्टे फल- इनका सेवन करना हानिकारक है।

❍तुलसी के पत्ते दांतों से चबाकर न खायें। अगर खाये हैं तो तुरंत कुल्ला कर लें। इसका अम्ल दांतों के एनेमल को खराब कर देता है।

**तुलसी सेवन का तरीका**

♦इसे प्रात: खाली पेट लेने से लाभ होता है।

♦इसके पत्तों को सुखाना हो तो छाया में सुखाएं।

♦फायदे को देखते हुए एक साथ अधिक मात्रा में न लें।

♦बिना उपयोग तुलसी के पत्तों को तोड़ना उसे नष्ट करने के बराबर है।

**तुलसी से स्वास्थ्य लाभ**

●श्याम तुलसी (काली तुलसी) पत्तों का दो-दो बूंद रस 14 दिनों तक आंखों में डालने से रतौंधी ठीक होती है। आंखों का पीलापन व आंखों की लाली दूर करता है।

●तुलसी के पत्तों का रस काजल की तरह आंख में लगाने से आंख की रोशनी बढ़ती है।

●तुलसी के चार-पांच ग्राम बीजों का मिश्री युक्त शर्बत पीने से आंव ठीक रहता है।

●तुलसी के पत्तों को चाय की तरह पानी में उबाल कर पीने से आंव (पेचिस) ठीक होती है।

●अदरक या सोंठ, तुलसी, कालीमिर्च, दालचीनी। थोड़ा-थोडा सबको मिलाकर एक ग्लास पानी में उबालें। जब पानी आधा रह जाए तो शक्कर नमक मिलाकर पी जाएं। इससे फ्लू, खांसी, सर्दी, जुकाम ठीक होता है।

●कभी-कभी किसी व्यक्ति में अधिक उत्तेजन (पागलपन) आ जाता है। ऐसे में लगातार तुलसी की पत्तियाँ सूंघें, मसलकर चबाएं, इसके रस को लें, सारे शरीर पर लगाएँ

पागलपन की उत्तेजना ठीक होने में सहायता मिलती है।

●तुलसी की 4-5 पत्तियाँ नीम की दो पत्ती के रस को 2-4 चम्मच पानी में घोंट कर पांच-सात दिन प्रात: खाली पेट सेवन करें, उच्च रक्तचाप ठीक होता है।

●कुष्ठ रोग में तुलसी की पत्तियाँ रामबाण सा असर करती हैं। खायें तथा पीसकर लगायें भी।

●तुलसी के पत्तों का रस एक्जिमा पर लगाने, पीने से एक्जिमा में लाभ मिलता है।

●तुलसी के हरे पत्तों का रस (बिना पानी में डाले) गर्म करके सुबह शाम कान में डालें। कम सुनना, कान का बहना, दर्द सब ठीक हो जाता है।

●तुलसी के रस में कपूर मिलाकर हल्का गर्म करके कान में डालने से कान का दर्द तुरंत ठीक हो जाता है।

●कनपटी के दर्द में तुलसी की पत्तियों का रस मलने से बहुत लाभ होता है।

● 10-12 तुलसी के पत्ते तथा 8-10 काली मिर्च की चाय बनाकर पीने से खांसी जुकाम, बुखार ठीक होता है।

●तुलसी के सूखे पत्ते न फेंकें। ये कफनाशक के रूप में काम में लाये जा सकते हैं।

●तुलसी के पत्तों के साथ 4 भुनी लौंग चबाने से खांसी जाती है।

●तुलसी के पत्ते 10, काली मिर्च 5 ग्राम, सोंठ 15 ग्राम, सिके चने का आटा 50 ग्राम और गुड़ 50 ग्राम, इन सबको पान व अदरक में घोंट लें तथा एक एक ग्राम की गोलियां बना लें। जब भी खांसी हो सेवन करें।

●तुलसी व अदरक का रस एक-एक चम्मच, शहद एक चम्मच, मुलेठी का चूर्ण एक चम्मच, मिलाकर सुबह शाम चाटें। यह खांसी की अचूक दवा है।

# जानते हो!

**-आदित्य प्रकाश**

❍भारत के संविधान का निर्माण करने के लिए संविधान सभा का गठन जुलाई 1946 में किया गया।

❍संविधान सभा में कुल 389 सदस्य थे, जिनमें प्रांतों से 292, देशी रियासतों से 93 तथा कमिश्नरी क्षेत्रों से 4 सदस्य थे।

❍भारत के विभाजन के कारण 31 अक्तूबर 1947 तक संविधान सभा के सदस्यों की संख्या घटकर 299 रह गई।

❍संविधान सभा की प्रथम बैठक 9 दिसम्बर 1946 को हुई थी।

❍13 दिसम्बर 1946 को डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद को संविधान सभा का स्थायी अध्यक्ष बनाया गया।

❍प्रारूप समिति का गठन 29 अगस्त 1947 को डॉ0 भीमराव अम्बेडकर की अध्यक्षता में किया गया।

❍भारतीय संविधान के निर्माण में कुल 2 वर्ष, 11 माह तथा 18 दिन लगे।

❍सम्पूर्ण संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया।

# हास्यम्

**✺कीर्ति कटारिया**

❖कार ड्राईवर- ऐ बच्चे, रास्ते से हट जाओ, नहीं तो यह कार तुम्हारे ऊपर से गुजर जाएगी।

बच्चा- चलो, चलो, मेरे ऊपर से आज तक कितने ही हवाई जहाज गुजर गए और मेरा कुछ नहीं बिगड़ा।

❖एक लड़का-मैं मरने के बाद अपना दिमाग किसी अस्पताल को दान कर देना चाहता हूँ।

दूसरा लड़का-लेकिन अस्पताल में वही चीजें दी जाती हैं जो अच्छी हालत में हों।

❖एक व्यक्ति ने दुकान पर जाकर दुकानदार से पूछा-'क्या आपके पास चूहा मारने की दवा है?'

दुकानदार बोला-'है, क्या आप दवा ले जाएँगे?'

व्यक्ति ने उत्तर दिया-'नहीं मैं चूहे को ही लेने भेज दूँगा।

❖बेटा- (माँ से) माँ, मैं अपने मित्र के जन्म दिवस पर क्या उपहार दूँ?

माँ- बेटा घड़ी दे दो।

बेटा- लेकिन यह तो बहुत छोटा उपहार है।

माँ- तो फिर घड़ा दे दो।

❖हरसी -(डाक्टर से) जी, मेरे दायें पैर में दर्द हो रहा है।

डाक्टर- कोई बात नहीं, उम्र के हिसाब से ऐसा होता है।

हरसी- पर डाक्टर, मेरे दोनों पैरों की उम्र तो एक ही है।

❖डाक्टर (मोनू से) क्या चोट बाजू के पास लगी है?

मोनू- जी नहीं, स्कूल के पास।

**सम्पादक : सुमेधा**

# प्रहेलिका:

❍निरंतर चलता है वह, नहीं किसी से डरता है वह।
कोई रोक नहीं पाता उसको,
फिर से कोई न पाता उसको।।

❍बोली में गुण बहुत हैं
पर मुझसे अच्छा कौन ?
सारे झगड़ो को टाल दूँ
बतलाओ मैं कौन?

❍आता है तो पुष्प खिलाता, पक्षी गाते गाना।
सभी को जीवन देता है पर उसके पास नहीं जाना।।

❍हरी कोठी है हमारी
उजली उजली धरती।
लाल लाल है बिस्तर पर
काली मछली सोती।।

❍वह कौन सी वस्तु है जो, सूखे
कपड़े उतारकर गीले कपड़े पहनती है?

उत्तर : समय मौन सूरज तरबूज कपड़े सुखाने की रस्सी

# विचार कणिका:

**❐प्रतिभा दीदी**

✍अच्छे लोगों की संगति से दुर्जन भी सज्जन बन जाते हैं।

✍घोर नरक में रहना अच्छा है, किन्तु परमात्मा किसी को दुष्टों की संगति न दे।

✍प्राण त्याग देना अच्छा है किन्तु नीच की संगति अच्छी नहीं।

✍अपने कार्यों को सूरज, चांद और सितारों की तरह निस्वार्थ बना दो, तभी सफलता मिलेगी।

✍अगर जिन्दा रहना है तो साहस के साथ जियो, खतरों से दूर भागने की बजाय डटकर उनका मुकाबला करो, जिन्दगी जिन्दादिली का नाम है।

✍मन को वश में करना बुद्धिमान पुरुष का काम है और उसके वश में हो जाना मूर्ख का।

✍ईश्वर ने हमें दो कान दिए और दो आँखें, परन्तु जबान केवल एक ही, ताकि हम बहुत ज्यादा सुनें, बहुत ज्यादा देखें, लेकिन बोलें कम, बहुत कम।

## प्रेरक-प्रसंग

❑नरेन्द्र सोनी

### देवता व असुर

**जो दूसरों के बारे में सोचता है वही देवता होता है और जो केवल अपने बारे में सोचता है वही असुर होता है। जो दूसरों का भला करता है खुद उसका भला भी होता है। अब यह बात तुम खुद सोच लो कि तुम्हारे में से बड़ा कौन है।**

एक बार देवता व असुरों मे विवाद हो गया। दोनों प्रजापति के पास आए। असुरों ने प्रजापति से कहा कि सब देवताओं को ही मान देते हैं हम असुरों को कोई भी सम्मान नहीं देता। सम्मान के असली आधिकारी हम हैं इसलिए हमारी पूजा होनी चाहिए। आप हमारा निर्णय कर दें।

इसके लिए प्रजापति ने दिन निश्चित कर दिया। एक भोज का प्रबंध कर दिया। भोज की शर्तें भी बता दीं। एक- भोजन करते समय सब की कोहनियों पर लकड़ियाँ बाँध दी जाएँगी ताकि वे मुड़ न सकें। दो- एक निश्चित समय में भोजन पूरा करना होगा। असुरों ने अपनी श्रेष्ठता के घमण्ड में पहले उन्हें भोजन कराने को कहा। प्रजापति ने उनका आग्रह मान लिया।

भोज के दिन पहले असुरों को बुलाया। शर्त के अनुसार उनकी बाहों को लकड़ी से बांध दिया गया ताकि उन्हें मोड़ा न जा सके। उसके बाद उन्हें भोजन करने को कहा। बांहें न मुड़ने के कारण असुर ठीक से भोजन नहीं कर सके। कोई कुत्ते बिल्ली की तरह खा रहा था, कोई भोजन को उछाल कर मुंह में पकड़ रहा था। निश्चित समय तक असुर भोजन भी नहीं कर पाए, भूखे रह गए, अपने कपड़े गंदे कर लिए व सारा भोजन बिखर गया।

अब प्रजापति ने देवताओं को बुलाया। देवताओं की बांहें भी लकड़ी से बाँध दी गईं। देवताओं ने विचार किया। सभी देवता एक दूसरे के सामने बैठ गए व एक दूसरे के मुंह में भोजन देने लगे। इस प्रकार सभी देवताओं ने समय से पहले भोजन कर लिया, खराब भी नहीं किया।

अब प्रजापति ने देवताओं व असुरों को बुलाया और कहा- देखो, देवताओं और असुरों मे यही अंतर है। जो दूसरों के बारे में सोचता है वही देवता होता है और जो केवल अपने बारे में सोचता है वही असुर होता है। जो दूसरों का भला करता है खुद उसका भला भी होता है। अब यह बात तुम खुद सोच लो कि तुम्हारे में से बड़ा कौन है।

---

बाल-गीत

## रुकने का तुम नाम न लो

**-डॉ० गणेशदत्त सारस्वत**

-सारस्वत सदन, सिविल लाईन्स,
सीतापुर, उत्तर प्रदेश

कदम बढ़ें तो रहें बढ़े ही-
रुकने का तुम नाम न लो।

मंजिल तुम्हें बुलाती प्यारे
खड़ी हुई है बाँह पसारे।
जीत उन्हीं की होती जग में-
जो मन से हैं कभी न हारे।
टूट भले ही जाओ लेकिन-
झुकने का तुम नाम न लो।
रुकने का तुम नाम न लो।।

राह तुम्हें पर्वत भी देंगे।
मार्ग न सागर रोक सकेंगे।
जिधर चलोगे तुम दृढ़ होकर
पीछे-पीछे लोग चलेंगे।।
रहो स्नेह से भरे लबालब
चुकने का तुम नाम न लो।
रुकने का तुम नाम न लो।।

नहीं दूसरों का मुँह-ताको।
अपने ही बल को बस आँको।
पीना पड़े जहर तो पी लो-
दुनियाँ को पर अमृत बाँटो।
हर हालत में रहो प्रफुल्लित-
घुटने का तुम नाम न लो।
रुकने का तुम नाम न लो।।

# गढ़ आया पर सिंह गया

तानाजी के बलिदान को भला कौन भूल सकता है। उन्होंने अपने मित्र शिवाजी की माता का मान रखने के लिए अपना सब कुछ निछावर कर दिया।

❐श्रीयुत् लल्लनप्रसाद व्यास

एक बार शिवाजी की माता जीजाबाई रामगढ़ के किले के ऊपर प्राकृतिक दृश्यों को निहारने के लिए गई। तभी उन्हें कुछ ही दूर पर सिंहगढ़ के किले पर मुगलों का झण्डा लहराता हुआ दिखाई पड़ा। कुछ समय पूर्व तक यहाँ केसरिया झण्डा लहराता था। जयसिंह के साथ सन्धि में यह किला मुगलों के हाथ में चला गया था। माता जीजाबाई को यह देखकर हार्दिक पीड़ा हुई। उन्होंने इस पीड़ा को शिवाजी के समक्ष व्यक्त किया।

तभी शिवाजी के मित्र ताना जी अपने दोनो पुत्रों के विवाह का निमंत्रण लेकर वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने माता का मुँह मलिन देखा तो इसका कारण पूछा। इस पर माता जीजाबाई ने उनके समक्ष भी अपनी पीड़ा व्यक्त की। बताया तो यहाँ तक जाता है कि जीजाबाई ने कहा कि जब तक सिँहगढ़ पर केसरिया ध्वज पुनः नहीं लहराएगा, वह अन्न, जल ग्रहण नहीं करेगी।

ताना जी ने माता की यह प्रतिज्ञा सुनी तो उन्होंने उन्हें आश्वासन दिया कि सिंहगढ़ पर पुनः शिवाजी का कब्जा होगा। इसके बाद उन्होंने उसी समय पुत्रों का विवाह स्थगित कर दिया। उन्होंने रात में कुछ सौ सैनिकों सहित किला जीतने के लिए कूच कर दिया। परन्तु वह किला जीतना कोई आसान काम नहीं था। उसकी रक्षा का भार उदयभान नामक सरदार के नेतृत्व में एक बड़ी मुगल सेना पर था। उदयभान अपनी शूरवीरता के लिए बड़ा प्रसिद्ध था।

तानाजी अपने सैनिकों के साथ आधी रात को किले के पास पहुँचे। उस समय किले के रक्षक, सैनिक नशे में चूर चैन की नींद सो रहे थे। तानाजी के सिपाहियों ने रस्सी से बन्धी हुई गोह किले की दीवार पर फेंकी। उसके बाद वे सैनिक किले पर चढ़ने लगे। कुछ ही सैनिक ऊपर चढ़ पाए थे कि दुर्भाग्य से रस्सी टूट गई। परन्तु कोई चिन्ता का कारण न था। तानाजी ऊपर चढ़ ही गए थे। शेष सैनिक अपने बन्धुओं द्वारा किले के मुख्य द्वार को खोले जाने की प्रतीक्षा करने लगे।

मराठा सेना के पहुँचते ही किले में खलबली मच गई। मुगल सैनिक जब तक संभल भी न पाए कि वीर मराठा सैनिकों ने उन्हें मौत के घाट उतारना शुरू कर दिया।

अचानक जब इस आक्रमण की सूचना उदयभान को मिली तो वह बहुत क्रोधित हुआ। उदयभान तलवार लेकर मैदान में आ गया। तानाजी और उदयभान के बीच घमासान युद्ध हुआ। परंतु मराठों का दुर्भाग्य कि तानाजी मारे गए। उदयभान भी घायल होकर गिर पड़ा। मराठा सेना में निराशा छा गई। कुछ सैनिक इधर उधर भी भागने लगे। परंतु इतने में ही तानाजी के भाई सूर्याजी सामने आए। उन्होंने अपनी वीर और ओजस्वी वाणी से मराठा सैनिकों में पुनः शक्ति भर दी। डटकर युद्ध हुआ। किले का मुख्य द्वार खोल दिया गया। शेष मराठा सैनिकों के आ जाने से अधिकतर मुगल सैनिक मारे गए। कुछ वहाँ से जान बचाकर निकल भागे। सिंहगढ़ पर पुनः शिवाजी का कब्जा हो गया।

जब शिवाजी को तानाजी की वीरगति का समाचार मिला तो उनकी आँखें सजल हो गईं। उन्होंने कहा– गढ़ तो मिल गया, पर सिंह चला गया।

तानाजी के बलिदान को भला कौन भूल सकता है। उन्होंने अपने मित्र शिवाजी की माता का मान रखने के लिए अपना सब कुछ निछावर कर दिया।

❒सहदेव 'समर्पित'

**गीत** (तर्ज : मुझे इश्क है--)

गर प्रीत करनी है तो परमामा से कर ले।
सुख की तलाश है तो बस ओ३म् को सुमर ले।।

परमामा ने जीवन तेरे लिए दिया है।
कुछ तो विचार कर तू कितना भला किया है।
उसकी क पा मिलेगी उसका ही ध्यान धर ले।।१।।

मिट्टी का ये बना है नश्वर शरीर तेरा।
जिसके भंवर में फंसकर तुझे वासना ने घेरा।।
मिट्टी मे ही मिलेगा सज ले भले संवर ले।।२।।

जितने हुए हैं योगी सबने यही कहा है।
जिसने भुलाया ईश्वर वही पाप में बहा है।।
बालक पकडता माँ को, ऐसे उसे पकड़ले।।३।।

जब ज्ञान पथ गहेगा होगी पवित्र बुद्धि।
करके उपासना को हो आत्मा की शुद्धि।।
उस ज्ञान के मुताबिक तू शुद्ध कर्म करले।।४।।

दुनिया तभी भली है जब आप खुद भले हों।
सद्भावना के मन में सुन्दर कुसुम खिले हों।।
सुधरेगा जग 'समर्पित' पहले स्वयं सुधर ले।।५।।

**गीत** तर्ज : जिन्दगी क्या है--

छोटी सी जवानी, कीमत ना जानी,
तू खोए विषयों में, डूबेगा गमों में--
करेगा जो नादानी।।

दो पल में ढल जाएगा ये जिस पर फिरे मचलता।
माटी का चोला है यह तन हर पल रंग बदलता।।
माटी में मिल जाएगी ये तेरी मस्त जवानी।।१।।

विषय वासना के चक्कर में जो भी फंसा वह रोया।
वक्त गए कुछ हाथ न आया, यह अनुपम धन खोया।।
ओ भोले इन्सान! तुम्हारी कितनी करुण कहानी।।२।।

परमेश्वर से प्रीत लगाले वह है एक सहारा।
मोह पास में बंधा 'समर्पित' मत फिर मारा मारा।।
मत खो तू अनमोल रतन यह बनकर के अज्ञानी।।३।।

**अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्क ता।**
**गोभज इत्किलासथ यत्सनवथः पूरूषम्।।**

ऋ० १०/९७/५

**भाव**

ओ भोले इन्सान अमोले जीवन का उपयोग करो।
लोक और परलोक सुधर ज्याँ कुछ ऐसा उद्योग करो।

आज रहा कल रहे ना रहे जीवन का विश्वास नहीं।
क्षणभंगुर है तेरा जीवन क्या तुझको अहसास नहीं।।
दो दिन रहना इस दुनिया में सदा किसी का वास नहीं।
है जीवन बेकार तेरा जो काटा भव का पाश नहीं।।
इन्द्रियों की करकै गुलामी मतना पैदा रोग करो।।१।।

पुरुषार्थ है नाम नहीं बस खाने और कमाने का।
नए नए रस राग करण का सजने और सजाने का।
पुरुषार्थ है नाम नहीं इन भोगों में फंस जाने का।।
पुरुषार्थ है नाम प्रभु से सच्ची प्रीत लगाने का।।
समय नहीं आने का फिर फिर बुद्धि का प्रयोग करो।।२।।

पैदा होता है चलता है और खतम हो जाता है।
गति कर रहा लगातार ये इसलिए जगत् कहाता है।
जो भी मानव इस दुनिया के परिवर्तन का ज्ञाता है।
धन बल और विद्या पाकर वह कभी नहीं मदमाता है।।
जो कुछ दिया प्रभु ने उसका त्यागभाव से भोग करो।।३

विषयों के चक्कर में फंस के क्यों जीवन बरबाद करै।
जो चीजें ना हुईं किसी की उन पर खड़ा विवाद करै।
इस दुनिया में कोई तेरा ना तेरी इमदाद करै।।
पूर्ण पुरुष जो तेरा मित्र है क्यों ना उसको याद करै।।
सहदेव कर इन्द्रिय संयम परमेश्वर से योग करो।।४।।

देवों का सोमपान- पृष्ठ २१ से आगे

का वर्णन करता है। उदीरते शब्द सामान्य ध्वनि को द्योतित नहीं करता अपितु उस वाणी से गति के लिए प्रेरित भी करता है जिससे मानव सर्वतः उन्नति को प्राप्त हो सकता है। इसी प्रकार आठवें मंत्र में सोम का विशेषण ''दक्षसाधनः'' कहा है- सोम वृद्धि का हेतु है क्योंकि (दक्षवृद्धौ शीघ्रार्थे च)। वास्तव में जब विद्वान् स्वाभाविक रूप से सूपदेश हेतु तथा राष्ट्र की उन्नति हेतु दुधारु गौ के समान छटपटाने लगे तो वह राष्ट्र चन्द ही दिनों में जगद्वन्द्य बन जाता है।

इसी भाँति दशवें मंत्र में सोम के विशेषण 'कविक्रतुः' 'कविः' आदि दिये हैं, जो उद्बुद्ध विद्वान् की ओर ही संकेत करते हैं। दूसरे दशक में सोम का विस्पष्ट विशेषण 'विपश्चित्' आया है जो किसी भी प्रकार वनस्पति एवं चन्द्रमा का विशेषण नहीं हो सकता और अगले चौथे मंत्र में सोम को 'स्वर्दृशम्' कहा है जिसके दो अर्थ हो सकते हैं- एक जिसने स्वर् (सुख विशेषण) स्वर्ग को देख लिया है। दूसरा जो स्वर्ग का रास्ता दिखाने वाला है। ऐसा वर्णन चेतन का ही हो सकता है। परन्तु खेद की बात है कि इतने स्पष्ट एवं सुसंगत वर्णन को देखकर भी पाश्चात्य विद्वानों की आँखें नहीं खुलीं और सोम का अर्थ एक नशा देने वाली लता कर दिया। क्या यह ईर्ष्या का परिणाम नहीं, क्या यह भारत के तथा वेदों के गौरव को समाप्त करने का षड्यन्त्र नहीं, कहाँ तक लिखें। आगे देखिए पांचवें मंत्र में कितना स्पष्ट लिखा है कि 'चेतनः प्रियः कवीनां मतिः।' वह सोम कवियों क्रान्तदर्शी ऋषियों का स्नेह भाजन मनन शक्ति से युक्त तथा चेतन है, प्रबुद्ध है। क्या चेतन शब्द के विशेषण देने पर भी कोई संशय का स्थान रहता है। परन्तु जिन्होंने भगवती श्रुति को गडरियों के गीत सिद्ध करने के लिए कलुषित संकल्प कर लिया है तथा जो भारतीय दिवान्ध अन्धेनैव नीयमाना यथान्धा के पात्र हैं उनकी समझ में यह सुसंगत विचार माला कैसे उतरे।

## आर्यसमाज, नकुड़ का वार्षिक चुनाव सम्पन्न

आर्यसमाज, नकुड़ जिला सहारनपुर का वार्षिक चुनाव गत २६ जून को श्री अमरीशकुमार की अध्यक्षता में आयोजित साधारण सभा की बैठक में सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ जिसमें निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए-

प्रधान - अभयसिंह सैनी एडवोकेट, उपप्रधान- पंकज कुमार सिंघल, मंत्री- भूपेन्द्र कुमार गोयल, उपमंत्री- डॉ० मांगेराम आर्य, कोषाध्यक्ष- हरिदत्त आर्य, पुस्तकाध्यक्ष- उमेश कुमार आर्य, लेखा निरीक्षक- प्रदीप कुमार

**प्रबंध समिति सदस्य** - सर्वश्री धर्मपाल गुप्ता, अनिलकुमार गुप्ता, डॉ० शिवकुमार, अमरीश कुमार, महेन्द्रपाल, विपिन कुमार

-भूपेन्द्र कुमार गोयल, मंत्री


नया उत्साह! ओ३म् नई खुशी!!

**MAHARSHI DAYANAND EDUCATION INSTITUTE, BOHAL**

Under the Control & Management of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
(Establish with the Permission of Haryana Govt. vide Sr. Act XXI of 180 Govt. of India)

**AN ISO 9001:2008 CERTIFIED ORGANIZATION**

**202, OLD HOUSING BOARD, BHIWANI-127021 (HAR)**

**JOB ORIENTED SELF EMOLOYED I.T.I., N.T.T. & OTHER DIPLOMA COURSE**

**करने व फ्रेंचाईजी लेने के लिए सम्पर्क करें।**

संस्थान के सभी कोर्स आत्मनिर्भर, स्वावलम्बी बनाने व रोजगार दिलाने में सहायक हैं।
संस्थान से I.T.I. कोर्स किये अनेक विद्यार्थी सरकारी/गैर सरकारी विभागों में कार्यरत हैं।

**बोहल कार्यालय सम्पर्क सूत्र :** **सचिव : नरेश सिहाग, एडवोकेट**
09728004587, 09813804026 चैम्बर नं. 175, जिला अदालत, भिवानी-127021 (हरि.)
Website : www.grngo.org 09255115175, 09466532152

# महेश सोनी को भ्रातृशोक

## आर्यसमाज महर्षि दयानन्द मार्ग बीकानेर के स्तम्भ श्री मनोहरलाल आर्य दिवंगत

**बीकानेर, राजस्थान,** अभी हाल ही में ४ मई को शताब्दी समारोह के संबंध में आर्यसमाज के इतिहास व स्मारिका की प्रकाशन कमेटी श्री मनोहरलाल जी आर्य के संयोजन में गठित की गई थी तब किसी ने कल्पना भी नहीं की थी वे २४ जून को हमसे अलविदा हो जाएँगे। श्री आर्य इस आर्यसमाज के न केवल वरिष्ठतम सदस्य थे बल्कि महर्षि दयानन्द के निर्देशानुसार अपनी आय का शतांश देने वालों में भी अग्रणी थे। आप इस आर्यसमाज के नींव के पत्थर रहे। स्वर्गीय श्री अक्षयचन्द्र जी (आर्य डेरी वाले) एवं स्वर्गीया श्रीमती रामरखी जी के सबसे बड़े पुत्र, वर्तमान उपप्रधान श्री रामेश्वर लाल जी एवं महामंत्री श्री महेशचन्द्र के अग्रज थे। आर्यत्त्व आप की रग रग में समाया हुआ था। आप स्वाध्यायशील थे तथा आर्यसमाज के सिद्धान्तों पर किसी से भी शास्त्रार्थ करने को तत्पर रहते थे। आप युवावस्था में आर्य युवक परिषद के सर्वेसर्वा रहे तो आर्य वीर दल में भी सक्रिय रहे। आर्यसमाज के भी विभिन्न पदों को आपने सुशोभित किया। आपको सहधर्मिणी के रूप में श्रीमती कलावती जैसी पदे-पदे साथ देने वाली देवी मिली तथा सुयोग्य सन्तान के रूप में मनीषा आर्या। आप स्त्री शिक्षा के प्रबल पक्षधर थे। समाज सेवा में अग्रणी रहते हुए आपने अनेक नए आयाम स्थापित किये। आप माध्यमिक शिक्षा निदेशालय, बीकानेर से कार्यालय अधीक्षक के पद से १९९२ में सेवानिवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के बाद भी वर्षों तक पैंशनर्स को अपनी दक्षता एवं योग्यता से अन्तिम समय तक लाभान्वित किया। आप बहुआयामी व्यक्तित्त्व के धनी थे। आपकी अन्त्येष्टि में भारी संख्या में आर्यजन और कर्मचारी उपस्थित हुए जो आपकी लोकप्रियता और सेवाभावी व्यक्तित्त्व का परिचायक है। आर्यसमाज आगामी वर्ष होने वाले शताब्दी समारोह में आप जैसे योग्य एवं सेवा भावी व्यक्तित्त्व को सम्मनित करने की परिकल्पना से गौरवान्वित हो रहा था कि आप विदा हो गए।

यह कौन गया महफिल से हर ँख से आँसू बहने लगे।
सब ओर उदासी फैल गई अरमान दिलों के कहने लगे।।
इस आर्य समाज की नदिया का मजबूत किनारा टूट गया।
क्या हाल कहें अपने दिल का जब दिल ही हमारा टूट गया।।
चलते चलते इन राहों पे कोई साथ अचानक छोड़ गया।
महर्षि दयानन्द के पथ का इक और पथिक दम तोड़ गया।।

आर्यसमाज महर्षि दयानन्द मार्ग बीकानेर के साप्ताहिक सत्संग के पश्चात् परमपिता परमात्मा से प्रार्थना की गई कि वे दिवंगत आत्मा को शांति और सद्गति प्रदान करें तथा परिजनों और आत्मीयजनों को इस अपूरणीय क्षति को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

शंभूराम यादव प्रधान तथा सदस्यगण

# नांदुरा में 36 दम्पत्तियों को प्राप्त हुआ यजमान बनने का सुअवसर

कार्यक्रम के संयोजक श्री यशपाल जानवानी (कोषाध्यक्ष, आर्य प्रतिनिधि सभा म0प्र0 एवं विदर्भ, नागपुर) ने अपने साथियों के साथ बैठक कर 24 से 26 जुलाई तक के वेद प्रचार की भूमिका बनाई और आशानुरूप सफलता प्राप्त हुई। प्रात: 9 से 11 बजे तक यज्ञ सत्र और सायंकाल 4 से 7 तक भजन उपदेश होते थे, जिसमें महिलायें अधिक संख्या में आती थीं। आचार्य श्री आनंद पुरुषार्थी जी होशंगाबाद ने कुछ अन्य सम्प्रदायों से तुलना करते हुए वैदिक धर्म के सिद्धांतों की श्रेष्ठता सिद्ध की। साईं बाबा के विवाद पर दो टूक टिप्पणी करते हुए कहा कि जो बात महर्षि दयानंद 135 वर्ष पहले कह रहे थे वह बात कुछ प्रतिशत आज शंकराचार्य जी को समझ आ रही है। यदि उस समय हिन्दू जाति ऋषि की बात मान लेती तो इतनी हानि तो न उठाती। भजनोपदेशक पंडित श्री संदीप वैदिक जी थे जिन्होंने रामायण, महाभारत के उद्धरण देते हुए भजन सुनाकर सभी का दिल जीत लिया। अंतिम दिन अधिक यजमान होने से पांच यज्ञ वेदियाँ बनाई गईं जिनमे 21 दम्पतियों ने श्रद्धापूर्वक आहुतियाँ दी। आचार्य जी ने आर्यसमाज के सत्संग को नियमित करने की दक्षिणा यजमानों से माँगी जो सबने स्वीकार की। अंत में ऋषि लंगर में 700 लोगों ने भोजन ग्रहण किया, जिसका व्यय मुख्य रूप से आर्य जानवानी परिवार ने अपने प्रतिष्ठान गायत्री प्रोविशन स्टोर्स से वहन किया।

**मनोहर रामचंदानी** मंत्री, आर्यसमाज, नांदुरा (जिला बुलढाणा) महाराष्ट्र

देश की रक्षा-- पृष्ठ ११ से आगे

देते हैं। यह प्रवृत्ति कहाँ से जागी ? स्वेच्छाचार से। खाओ, पीओ और ऐश करो की भावना कहाँ से आई ? भोग की इच्छा से। अनेकों असाध्य एवं भंयकर रोगों को जन्म कहाँ से हुआ ? भोग की विचारधारा से। क्या आप यह आशा कर सकते हैं कि फैशन एवं नशों में डूबे हुए, कामुकता एवं नग्नता को उन्नति मानने वाले, अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को नोंच कर खाने वाले, सदैव दूसरों के धन, स्त्री एवं सम्पत्ति पर कुदृष्टि रखने वाले, आतंकियों का साथ देने वाले इस देश की कभी रक्षा कर पायेंगे ? भूल जाईये।

**2. भौतिकता की अंधी दौड़ :-**

आज हमारे समाज का कुछ व्यापारीकरण तो हो चुका है जो धीरे-धीरे संपूर्णता की ओर बढ़ रहा है। इसी दौड़ में धन कमाना ही मुख्य उद्देश्य हो गया, फिर उसके लिए भले ही हमें कोई भी विधि अपनानी पड़े। धन आ गया तो बस सब कुछ मिल गया, सारे सुख उपलब्ध हो गये। यह ठीक है कि धन की अपनी महत्ता है, धन से ही सब कार्य सिद्ध होते हैं, परंतु केवल धन ही हो और वह भी अनुचित ढंग से कमाया जाये, तो भी वह सुख देने वाला नहीं हो सकता। हमारे देश में धन कमाया जाता था सबसे पहले देश और धर्म की उन्नति के लिए, दान के लिए और तीसरे स्थान पर आता था भोग के लिए। धन कमाने के साधन भी श्रेष्ठ एवं धार्मिक होने आवश्यक थे। एक छोटा सा उदाहरण आपके समक्ष रख रहा हूँ। गर्मियों में यहाँ स्थान-स्थान पर ठंडे पानी की प्याऊ लगाई जाती थी, जहाँ पर लोग स्वेच्छा से, सेवा भाव से पानी पिलाने बैठते थे। कई स्थानों पर यह कार्य पूर्ण सेवा भावना से युक्त होता था और कई स्थानों पर पानी पिलाने वालों को कुछ आर्थिक सहायता भी लोग दे दिया करते थे। यह तो थी हमारी दान एवं सेवा की वृत्ति। अब इसका नया रूप क्या बन गया। पानी बोतल में भरकर बेचा जाने लगा। दोनों का अंतर आपको समझ में आ रहा है ना। पानी तो दोनों पिला रहे हैं लेकिन भावना में दोनों के अंतर है। कुछ वर्ष पहले वर्ल्ड बैंक ने यह कहा था कि हम भारत सरकार को जो धन दे रहे हैं उसका उपयोग सार्वजनिक हैंड पम्प लगाने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। क्यों ? क्योंकि हमारे द्वारा प्रदत्त राशि का कई गुणा बढ़कर हमें वापिस चाहिए। उसका मानवता से कोई लेना देना नहीं है।

धन कमाने की लालसा में हम आज अपने बच्चों तक की चिंता किये बिना दिन रात भाग रहे हैं। न माता-पिता के लिए समय है, न बच्चों के लिए। प्रात:काल से ही पति एवं पत्नी दोनों की दौड़ शुरू होती है। सायंकाल को देर से घर पर पहुँचते हैं। बच्चे या तो नौकरों के पास रहते हैं या अकेले। दोनों ही परिस्थितियाँ घातक हैं। नौकरों के द्वारा कई बार भयानक शोषण यहाँ तक कि उनके द्वारा व्यभिचार आदि भी देखा जाता है। और नहीं तो कम से कम वे दुश्चरित्र और व्यसनी तो हो ही जाते हैं। जो वास्तविक धन था उससे तो हाथ धो बैठे और कागज के टुकड़ों को जान से अधिक प्यारा मान रहे हैं। घर पर टीवी है, बच्चे अकेले हैं फिर जो उनको पसंद आता है- देखें। बिगड़ने के लिए पूरा क्षेत्र खुला पड़ा है। बच्चों की सभी उचित अनुचित मांगें पूरी करके माता-पिता यह समझते हैं कि वे उन्हें बहुत प्यार कर रहे हैं, यह नहीं सोचते कि उनका विनाश कर रहे हैं। मोबाईल, बाईक और मित्रता ने आज कितने युवकों एवं युवतियों का विनाश कर डाला है यह अनुमान तो आंकड़ों से ही पता चलेगा।

मानव जीवन के जो चार उद्देश्य हमारे महान ऋषियों ने निश्चित किए थे। वे हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इस समय तो दो बिल्कुल विस्मृत हो चुके हैं अर्थात धर्म एवं मोक्ष को छोड़ कर केवल अर्थ एवं काम को ही मुख्य मान रहे हैं। धन कमाईये, परंतु धर्मपूर्वक, तभी वह श्रेष्ठ फलदायक होता है। धन के लिए जो हा-हाकार पश्चिम में मचा है, वही यहाँ पर मच गया इसलिए सब जगह रिश्वत, भ्रष्टाचार एवं घोटाले ही घोटाले हैं। इतने से जब लोगों को संतोष न हुआ तो यहाँ का धन लूट कर विदेशों के बैंकों में जा भरा। क्या इस प्रकार का धन सुख देने वाला हो सकता है ? कदापि नहीं। क्या इस प्रकार से देश की रक्षा हो पायेगी ? कदापि नहीं। प्राचीन काल में चारों वर्णों में से केवल दो वर्ण क्षत्रिय एवं वैश्य और इनमें भी मुख्य रूप से वैश्य धन कमाने का कार्य किया करते थे और चारों आश्रमों में से केवल गृहस्थ ही कमाता था। फिर भी यह देश विश्व का गुरु और सोने की चिड़िया कहलाता था। परंतु आज सभी वर्ण, सभी आश्रमी और परिवार के सभी सदस्य कमाते हैं फिर भी पूरा नहीं पड़ता। धन की यह कैसी दौड़ है ?

महात्मा फूलसिंह-- पृष्ठ १९ से आगे

लिए सबसे बड़ी समस्या थी इन लोगों के साथ रोटी बेटी का संबंध। इस संबंध में एक जैलदार बाधा डालता था। भक्तजी ने उसके विरोध में ११ दिन का अनशन किया। मटिण्डु के आर्य श्री हरद्वारीसिंह ने अपनी सुपुत्री का विवाह रायपुर ग्राम के शुद्ध हुए मूले जाट केहरीसिंह से किया। इस विवाह में भाती बनने का कार्य भक्त फूलसिंह जी ने किया।

महात्माजी ने गौरक्षा के लिए भी अनेक बार संघर्ष किए। फूलसिंह जी ने संभालखा हत्थे को सामूहिक शक्ति प्रदर्शन के बल पर बन्द करवाया। १९३७-३८ में लाहौर में खुलने वाले हत्थे को बन्द करवाने में भी महात्माजी का महत् योगदान रहा। सन् १९२८ में ललितखेड़ा ग्राम में पधारे तो देखा कि गांव में गौवों के घूमने फिरने के लिए कोई शामलात भूमि नहीं है और दिन में भी गौवें घरों के अन्दर बंधी हुई हैं। आप ने गांव वालों को गौवों के लिए शामलात गौचरान भूमि छोड़ने की प्रेरणा दी। गांव वासियों पर इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं हुआ। अन्ततः आपने इस कार्य के लिए अनशन प्रारम्भ कर दिया। १९ दिन के अनशन के बाद ग्रामवासियों के हृदय पसीजे और सामूहिक भूमि छोड़ने की बात को स्वीकार कर लिया।

महात्मा जी ने हरियाणा के ठेठ ग्रामीण क्षेत्र में कन्या गुरुकुल खानपुर की स्थापना केवल तीन ब्रह्मचारिणी कन्याओं के साथ की थी। हालांकि इस कार्य के लिए उनके कुछ साथी और गुरुकुल भैंसवाल की कार्यकारिणी की इसमें पूर्ण सहमति न थी। गुरुकुल का संचालन, जिसका आर्थिक आधार केवल दान हो, उस युग में कोई आसान कार्य न था। किन्तु महात्मा जी की तपस्या के प्रभाव से वह संस्था आज एक स्वतंत्र विश्वविद्यालय का रूप धारण कर चुकी है। महात्माजी के बलिदान के पश्चात् उनकी सुपुत्री पद्मश्री सुभाषिणी देवी ने इस संस्था को विकसित करने में अपना जीवन अर्पित कर दिया।

यह इस मनुष्य समाज की विडम्बना है कि मानवता का उपकार करने वालों के जीवन रुढ़िवादी धर्मान्धों के कुचक्रों का शिकार हो जाते हैं। पांच दिग्भ्रमित मुसलमान युवक रात के अंधेरे में आए और बैटरी का प्रकाश डालकर पिस्तौल की तीन गोलियों से विश्राम करते हुए महात्मा जी की जीवनलीला समाप्त कर दी। यह तिथि थी- १४ अगस्त १९४२! किन्तु क्या कोई किसी के यशः शरीर को भी कभी मार सका है? महात्मा जी की कीर्त्ति पताका हरियाणा के पहले महिला विश्वविद्यालय के रूप में आज भी दिग्दिगन्त में फहरा रही है।

**आधार**

१-आर्यसमाज के बलिदान : स्वामी ओमानन्द सरस्वती
२-हरियाणा के आर्यसमाज का इतिहास : डॉ० रणजीत सिंह
३-परिचायिका : महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक

ओ३म्

M- 98968 12152

रवि स्वर्णकार

हमारे यहाँ सोने व चांदी के जेवरात
आर्डर पर तैयार किये जाते हैं।

प्रो० रविन्द्र कुमार आर्य

आर्य समाज मंदिर, रेलवे रोड़,
जीन्द (हरि०)-१२६१०२

दीप प्रकाशन

(वैदिक साहित्य के प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता)

शांतिधर्मी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित साहित्य के लिए व शांतिधर्मी की वार्षिक, आजीवन सदस्यता के लिए भी संपर्क कर सकते हैं।

दीपचन्द आर्य

मोबाईल-94161 94371

मिलने का स्थान-
आर्यसमाज घंटाघर, भिवानी

# अच्छे आचरण से ही समाज सुन्दर बनेगा

❒रवीन्द्र सिंह लोहान, अलेवा

क्या आपने कभी सोचा है कि आज इतने दंगे-फसाद क्यों हो रहे हैं? क्यों लोग एक-दूसरे की बात नहीं सुनते? भाई-भाई में बैर क्यों होता है? पुत्र पिता का कहना नहीं मानता और पिता भी पुत्र को समझने की चेष्टा नहीं करता। और क्यों सब जगह भ्रष्टाचार फैला हुआ है? मेरे विचार में यह सारी स्थिति 'आचरण की सभ्यता' की कमी के कारण है। 'आचरण' का अर्थ व्यवहार तथा चाल-चलन होता है और 'सभ्यता' का अर्थ है सभ्य होने का भाव, सामाजिक उन्नति आदि। सामाजिक उन्नति के लिए अच्छा चाल-चलन ही आचरण की सभ्यता का अर्थ कहा जा सकता है।

विद्या, कला, साहित्य तथा धन से अधिक आचरण का महत्त्व है। अच्छा आचरण ही इन चीजों को सौन्दर्य प्रदान करता है। शील-आचरण से युक्त होने पर भी व्यक्ति निर्धन होने पर भी बड़े-बड़े राजाओं के दिल को जीत लेता है। अच्छे आचरण की भाषा मौन अर्थात् शब्द रहित होती है। व्यक्ति के सद्गुण उसके आचरण में प्रतिबिम्बित होते हैं। व्यक्ति अपने शब्दों द्वारा नहीं बल्कि अपने अच्छे कार्यों द्वारा दूसरों पर प्रभाव डाल सकता है। ईमानदानी और लग्न से कार्य करना आचरण की उन्नति में सहायक सिद्ध हो सकता है।

सद्-आचरण की प्राप्ति में समय लगता है। जिस प्रकार हिमालय का निर्माण होने में असंख्य सदियाँ लगी हैं उसी प्रकार सद्-आचरण की उपलब्धि के लिए भी समय-साधना की जरूरत होती है। सद्-आचरण को व्यक्तित्व का अंग बनाने के लिए निरन्तर प्रयास की आवश्यकता रहती है।

जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उद्देश्य सद्-आचरण की प्राप्ति ही है, परन्तु आचरणशील बनने के लिए व्यक्ति की आत्मा में बल होना अनिवार्य है। मानव यदि अपने भीतर के देवत्व को जाग्रत कर लेता है तो इतिहास के पन्नों में उसका नाम सदैव के लिए स्वर्णाक्षरों में अंकित हो जाता है। जो व्यक्ति कठोरतापूर्ण जीवन जीने से

विद्या, कला, साहित्य तथा धन से अधिक आचरण का महत्त्व है। अच्छा आचरण ही इन चीजों को सौन्दर्य प्रदान करता है। अच्छे आचरण की भाषा मौन अर्थात् शब्द रहित होती है। व्यक्ति के सद्गुण उसके आचरण में प्रतिबिम्बित होते हैं। व्यक्ति अपने शब्दों द्वारा नहीं बल्कि अपने अच्छे कार्यों द्वारा दूसरों पर प्रभाव डाल सकता है।

हटता है, वह कभी उन्नति नहीं कर सकता। राबिनहुड जैसे वीरों की इसीलिए प्रशंसा की जाती है कि भयंकर कष्टमय जीवन जीने में उसने कभी पराजय अनुभव नहीं की, उसका साहस कभी डगमगाया नहीं।

कई लोग धर्म के ऊपरी आडम्बरों को ही महान आचरण या सच्चे धर्म का प्रतीक मान लेते हैं। यदि यह सत्य होता तो आज सर्वाधिक भारतीय शील-आचरण व्यक्ति होते। हमारे देश में ऐसे लाखों लोग तिलक छापा लगाकर स्वयं को ईश्वर का प्रतिनिधि कहते हैं। परन्तु सदाचरण की प्राप्ति बाहरी आडम्बरों से सम्भव नहीं है।

धनवान व्यक्तियों को चाहिए कि वे आसपास के निर्धनों के प्रति सहानुभूति तथा दया का भाव रखें। ज्ञानी पुरुषों को चाहिए कि उनके निकट रहने वाले व्यक्तियों को भी ज्ञान का आलोक मिले। इस प्रकार आचरण की सभ्यता का सम्बन्ध पूरे समाज से है। सद्-आचरण का विकास करने वाले व्यक्ति ही महापुरुष कहलाते हैं। अच्छे आचरण के कारण ही स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द जैसे लोग विश्वबंधु बन सके।

शील-आचरण होने पर ही हम जीवन को सच्चे अर्थों में जी सकते हैं तथा समाज को सुखी बनाने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक चन्द्रभानु आर्य द्वारा अपने स्वामित्व में, ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६ १०२ (हरि०) से २४-०७-२०१४ को प्रकाशित।

आर्यसमाज, नांदुरा (जिला बुलढाणा) महाराष्ट्र में आयोजित कार्यक्रम में हर्षित जनसमूह के साथ अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक प्रवक्ता श्रद्धेय आचार्य आनन्द पुरुषार्थी।

आर्यसमाज महर्षि दयानन्द मार्ग बीकानेर, राजस्थान द्वारा आयोजित दस दिवसीय संस्कृत सम्भाषण शिविर में डॉ. नन्दिता सिंघवी, राजेन्द्र सुथार, डॉ. रामगोपाल व डॉ. रतिराम।

आस्था (बिल्कुल बाएँ) अपनी सहेलियों के साथ अपने विद्यालय के कार्यक्रम में (रंगीला सावन आया रे) गीत प्रस्तुत करते हुए।

R.N.I. No. 70866/99 शान्तिधर्मी हिन्दी मासिक (अगस्त, २०१४) P.R. No. : PKL 150-A/2014-16

ओ३म्

# शांतिधर्मी एक अद्वितीय पत्रिका है

## इसमें परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिये स्वस्थ और सुरूचिपूर्ण सामग्री होती है।

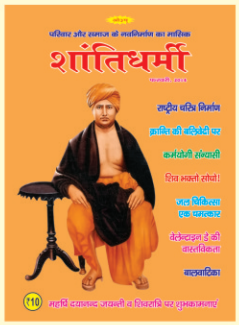


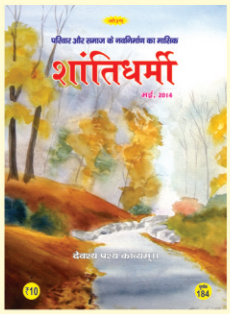


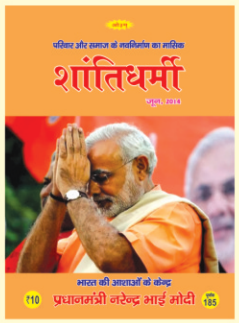


- **शांतिधर्मी** में धर्म-दर्शन के रहस्य, राष्ट्र व समाज की ज्वलंत समस्याओं पर अधिकारी विद्वानों के श्रेष्ठ विचार होते हैं।
- **शांतिधर्मी** भारतवर्ष के गौरवपूर्ण इतिहास की झलक दिखाता है।
- **शांतिधर्मी** वह मार्ग दिखाता है, जिसे पाने के लिये लोग भटक रहे हैं। परिवार में समाज में सह-अस्तित्व व अन्तरात्मा में सुख शांति का संदेशवाहक है।
- **शांतिधर्मी** उस अध्यात्म का प्रचार करता है-जिसे अपनाने में देश-काल, जाति, मजहब, सम्प्रदाय की सीमाएँ आड़े नहीं आतीं। यह सच्चे ईश्वरीय ज्ञान का प्रचारक है।
- **शांतिधर्मी** स्वाध्याय भी है और स्वस्थ मनोरंजन का साधन भी।
- **शांतिधर्मी** प्रत्येक श्रेष्ठ-धार्मिक-राष्ट्रप्रेमी-मानवतावादी-व्यक्ति के लिये एक विचार-सूत्र है। प्रत्येक श्रेष्ठ परिवार का आभूषण है।

### शांतिधर्मी पढ़िये-

**अपने प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, ईश्वर के प्रति सर्वांगीण दायित्वों को जानिये।**

**जीवन के जटिल व गूढ़ रहस्यों को सहज ही सुलझाईये।**

**शान्तिधर्मी कार्यालय**

**756/3, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक)**

**जीन्द-126102 (हरियाणा)**

**मो.** 09416253826 E-mail : shantidharmijind@gmail.com